श्रीः

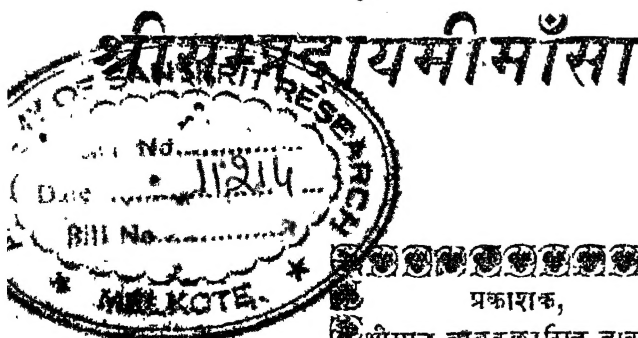
श्रीमते रामानुजाय नमः ।



पाटलिपुत्र "पटना" मण्डलान्तर्गत श्रीपतिपुर निवासि श्रीरामशरणात्मज श्रीस्वामि धरणीधराचार्य्यैं विरचिता श्रीबालसूर्य्यप्रभाटीकया सहिता विषमस्थल टिप्पण्या च समुद्भाषिता ।



श्रीसम्प्रदायमीमाँसा





प्रकाशक,

श्रीमान् बाबू कल्लर सिंह डाक्टर

मु० लालपुर मौ० मेरनटोले

पो० कलुआही जि० दरभंगा

श्रीः

❀ श्रीमद्वेङ्कटेश्वरो विजयतेतराम् ❀

पाटलिपुत्र "पटना" मण्डलान्तर्गत श्रीपतिपुरादेवारिः

श्रीरामशरणात्मज श्रीस्वामिधरणीधरार्य्यैर्विरचिता

श्रीबालसूर्य्य प्रभा टीकया संहिता विषमस्थल

टिप्पण्या च समुद्भाषिता

श्रीसम्प्रदाय-मीमाँसा ।

प्रकाशक—

श्रीमान्-बाबू-कल्लरसिंहस्य डांकदरः

मु० लालपुर गौरी भैरनटोले पोष्ट कलुआही

ज़िला दरभङ्गा ।

मुद्रक बो० डी० शास्त्री रमेशआर्ट प्रेस, अयोध्या ।

ता० ११-८-४३ ई० { श्रावण कृष्ण
संवत् २००० श्रीविक्रमीय
संवत् ९०७६ श्रीरामानुजीय

प्रथमबार १०००] मूल्यं रू० १)

❀ उद्देश्य ❀

त्यज दुर्जन संसर्गं भज साधु समागमम्।
कुरु पुण्य महोरात्रं स्मर नित्यमनित्यताम् ॥२६।

इति गरुड़पुराण पूर्वखण्ड अध्याय १०।

अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव शाश्वतः।
नित्यं सन्निहितो मृत्युः कर्त्तव्यो धर्मसंग्रहः ॥१९॥
प्राणनाशस्तु कर्त्तव्यो यः कृतार्थो न समृतः।
अकृतार्थस्तु यो मृत्युं प्राप्तः खर समो हि सः। २५॥

इति व्यासस्मृति अध्याय ४।

अर्थ—दुष्टों का संग छोड़ साधु सज्जनों की संगति करना चाहिये, तथा अहरहः पुण्यकार्य्यों का सम्पादन करते हुए संसार की अनित्यता का स्मरण करते रहना चाहिए २६। शरीर निरंतर नहीं रहता धनादि विभव भी सदैव नहीं रहता और मृत्यु नित्य समीप ही रहती है १९। एक दिन मरण अवश्य होगा परन्तु कृतार्थ मनुष्य मरने पर भी जीवित के तुल्य और अकृतार्थ रह कर ही जिसकी मृत्यु होगई वह खर "गधा" के सदृश है २५।

स्वयमाचरति शिष्यानाचारे स्थापयेत्तु यः।
आचिनोति हि शास्त्राणि तमाचार्य्यं प्रचक्षते ॥

अर्थ—जो पुरुष स्वयं आचारशील हो शिष्यों को आचरणयुक्त बनावें तथा शास्त्रों का संग्रह करें उन्हीं को आचार्य कहा जाता है।

श्रावण कृष्ण १२ बुधवार
सं० २००० श्रीविक्रमीय

विनीत,
स्वाम्युपनामकधरणीधराचार्य्य,
विभीषणकुण्ड, उत्तरताताद्रिमठ।

श्रीमतेरामानुजायनमः।

अनुबन्धचतुष्टय।

रामानुजार्य चरणं हृदि संस्थाप्य सादरम्।
लिखाम्यज्ञ प्रबोधार्थ अनुबन्ध चतुष्टयम्॥

हमको इस 'श्रीसम्प्रदायमीमांसा" ग्रन्थ में केवल चार अनुबन्ध दिखाना है जो पाठकों को पढ़ने से स्पष्ट समझ में आजायगा। अनुबंध (उपक्रम) कहते हैं प्रकरण को, वह प्रकरण चार हैं—विषय १ प्रयोजन २ सम्बन्ध ३ और अधिकारी ४। 'श्रीसम्प्रदाय" नामक जो पुस्तिका छपी थी उसीकी इसमें मीमांसा है। इसीवास्ते इस पुस्तिका का नाम "श्रीसम्प्रदाय-मीमांसा" है।

जिस वक्त लेखक किसीभी विषय के ग्रन्थ को लिखने के वास्ते बैठता है तो उसके हृदयकमल में चार अनुबन्ध आकर अपना डेरा डाल लेते हैं।

विषय १—संसार में जितनी सम्प्रदायें हैं उनमें यही श्री सम्प्रदाय शुभ्र है किन्तु अन्य सम्प्रदायों को तरफ न देखकर इसी पर नजर फैंकी। तोता उत्तम और मीठे फल को ही काटता है, इसी प्रकार जो दूसरे की विभूति आचार के आनन्द को न सहनेवाले मत्सरी हैं उनकी आत्मा सहन न कर सकी और वे इसपर झुकही तो गए। अब इस श्रीसम्प्रदाय से उत्तम शब्द कहाँ मिलै, इसवास्ते हेडिंग पर श्रीसम्प्रदाय ही रखा और इस पुस्तिका

के गर्भभाग में शास्त्रअविहित कचरा बातों को भरकर अपने भी श्रीसम्प्रदाय के भीतर घुसने का विचार करने लगे, परन्तु शास्त्र-अविहित कर्मोंके करनेवाले इस श्रीसम्प्रदाय के भीतर कैसे अपना कदम रख सकते हैं, क्योंकि जो मनुष्य शास्त्र की विधि को छोड़ कर मनमाना काम करते हैं वह न तो सिद्धि को प्राप्त होते न सुख को ? और न गति को प्राप्त होते (गोता १६।२३-२४)। अतएव जो द्वारे अखाड़े खालसे इत्यादि "श्रीसम्प्रदाय" नामक पुस्तिका में लिख दिए हैं वो शास्त्र अविहित होने के कारण श्रीसम्प्रदाय में कचरा हैं। इस वास्ते ऐसे व्यक्तियोंको श्रीसंप्रदाय की शरण नहीं मिल सकती। बस ! इस "श्रीसम्प्रदायमीमांसा" पुस्तिका में यही विषय है।

प्रयोजन २—जो "श्रीसम्प्रदाय" पुस्तिका में अप्रामाणिक बातों को लिखकर अपना प्रयोजन सिद्ध करना चाहते हैं ऐसी बे हाथ पैर की अनर्गल बातों को हटना, सच्छ्रीसप्रदाय का प्रकाश करना और धोखाबाज व्यक्तियोंसे मुमुक्षियों को बचाना इस "श्रीसम्प्रदाय मीमांसा" ग्रन्थ का प्रयोजन है।

सम्बन्ध ३—सब सम्प्रदायों से श्रेष्ठ जो श्रीसम्प्रदाय है कि जिसे श्रीरामनुज* सम्प्रदाय कहते हैं, जिससे बढ़कर आचार

---

* अविद्या वा सविद्या वा ब्राह्मणा मामकी तनुः ।।३८।।
इति गर्गसंहिता अश्वमेधखंड अध्याय ६०।

अर्थ—ब्राह्मण मूर्ख हो या पण्डित हो श्रीकृष्णजी का आदेश है कि मेरा शरीर है। महात्माओ ? ध्यान पूर्वक विचारें श्रीरामानुज स्वामी के अपमान करके किस लोकको जांयगे।

किसी सम्प्रदाय में नहीं है, ऐसे आचार सम्मिलित श्रीसम्प्रदाय से यह छोटीसी "श्रीसम्प्रदाय मीमांसा" पुस्तिका संबंध रखतीहै।

अधिकारी ४—जितने जीवमात्र हैं और जितने तत्व हैं सबकी श्रीमन्नारायण से उत्पत्ति है वही श्रीमन्नारायण समयपाकर रामकृष्णादि अवतारों को धारण कर अपने प्रपन्नों को आनन्द देते हैं। संसार के जीवों का उदर यही भरते हैं अन्य को अधिकार नहीं है। इन्हीं के बिना प्रपन्नता के जीव दुखी हैं और श्रीमन्नारायण ही आदि हैं, श्रीमन्नारायण से और जीवों से पिता पुत्र की समानता है इसवास्ते इस पुस्तिका में श्रीमन्नारायण का विषय है इससे इस "श्रीसम्प्रदाय मीमांसा" पुस्तिका के अधिकारी सभीं हैं।

श्रावण कृष्ण १२ बुधवार
संवत् २००० श्रीविक्रमीय
संवत ९०६ श्रीरामानुजीय

स्वाम्युपनामकधरणीधराचार्य्य,
उत्तरतोताद्रिमठ 'श्रीवेङ्कटेशमन्दिर'
श्रीविभीषणकुंड, अयोध्या
जिला फैजाबाद (संयुक्तप्रदेश)

❀ प्रेमोपहार ❀

श्रीमान्...

विनीत...

भूमिका

इस ग्रन्थ के पूर्व एक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है, श्रीअवधवंशीयक्षत्रियमार्तण्ड नाम की जिसमें पंचगौड़ और पंचद्रविड़ ब्राह्मणों की उत्पत्ति और उनके गोत्र प्रवर वेद उपवेद शाखा सूत्र छन्द देवता आदि षोडश संस्कारादि बताये गये हैं तथा सूर्यवंशीय और चन्द्रवंशीय क्षत्रियों के इतिहास और सब धर्मों के उपदेश आदि सप्रमाण निरूपण हैं। पुस्तक मिलने का पता, मन्त्री श्रीअवधवंशीय क्षत्रियसभा या श्रीबाबूरामपालसिंह श्री राजापुर, पो० नयागाँव जिला सारण (छपरा)।

दूसरी पुस्तक वर्णव्यवस्थादिग्दर्शन यह छप गई है। यह तीसरा ग्रन्थ श्रीसम्प्रदाय मीमांसा नामक है इसमें नूतन परम्परावाले महात्माओं के सम्बन्ध में प्रमाण पूर्वक विचार किया गया है क्योंकि नूतन परम्परावाले लोगों का विचार है कि श्रीबालानन्दस्वामी के समय से हम सब बैरागी जाति होगये हैं तभी से काठिया १ मूंजिया २ लोहलंगड़ी ३ खाकी ४ तपस्वी ५ जटाधारी ६ पञ्चकेशी ७ रसिक ८ नागा ९ अतीत १० आदि ३२ अनेक भेद बन गये हैं परञ्च रामानुजमत में यह सब एक भी नहीं है इस कारण निकृष्ट शूद्र प्रवर्तित पथ में रामानुज मत है और उक्त हेतुओं से हम सब श्रीसम्प्रदायाचार्य हैं।

उक्त बैरागी जाति के सम्बन्ध में एक छोटी पुस्तिका

२४ पृष्ठ की "श्रीसम्प्रदाय" नाम की खींचखांच कर निर्माणकरके नूतनपरम्परावाले लोगों के प्राचीन अभिलाषा को पूर्ण कर दिया है। पुस्तक आदि का लिखना और प्रकाश करना साहित्यसंसार के हेतु बहुत ही गौरव की वस्तु है परन्तु किसी सम्प्रदाय पर कटुवचनों के साथ आक्षेप करना यह सभ्यता से बिल्कुल विरुद्ध है, यदि शूद्र अपने को ब्राह्मण और ब्राह्मण अपने को शूद्र कहै तो इसमें दूसरे की कोई हानि नहीं चाहे कोई माने या न माने किन्तु किसी सम्प्रदाय पर कटुवचनों के साथ आक्षेप करना यह कहां तक उचित है।

समाचार पत्रों के लेख स्थायी नहीं होते हैं किन्तु जो लेख पुस्तकरूप में लिखे और प्रकाशित किये जाते हैं वह स्थायी होते हैं चाहे वह सत्य हों अथवा असत्य। साहित्यसमाज का कर्तव्य है कि प्रामाणिक लेखोंका आदर और अप्रमाणिक लेखों का निरादर करते हुए अग्रसर होने का प्रयत्न करता रहे तथा सत्य का प्रकाश संसार के अर्थ करता रहे जिसमें कि मनुष्योंको सार वस्तुओं का ज्ञान होजावे कारण कि उपेक्षा करने से धर्मों के लोप होजाने का भय रहता है। समाज सम्बन्धी विषयों का संग्रह मैं जहां और जिस देश में रहा सदा करता रहा किन्तु उन सबसे मेरी आत्मा संतुष्ट नहीं हुई कारण कि जिन किंवदन्तियों को जहाँ सुना उनसबों को आर्षग्रन्थों के विरुद्ध ही पाया इसलिए मेरा सिद्धान्त है कि बिना आर्ष प्रमाण के किसी विषय पर कुछ लिखना व्यर्थ है। अन्तमें एक बात और कहना है कि मेरे पुराने ढंग की हिन्दी पर चतुर पाठक ध्यान न देवें।

स्वाम्युपनामकधरणीधराचार्य।

धन्यवादाः सूर्य्य "अवधवंशीय" श्रीवाबू कल्लरसिंहाय ।

इक्ष्वाकुवंश प्रभवं वेद वेद्यं सनातनम् ।
सर्व क्षेम प्रदं सेव्यं श्रीरामं समुपास्महे ॥१॥
चिरात्कृत समुत्साहः कार्य्यव्यग्रोपि साम्प्रतम् ।
"श्रीसम्प्रदाय मीमांसां" प्रकाशयितुमारभे ॥२॥
महत्कार्य्यैश्च सक्तोपि लब्धकालः कथंचन ।
अवश्य कृत्यमेतद्धि पुराऽऽलिख्यैव धारितम् ॥३॥
द्रव्याभावेन लेख्यन्तत्स्थूलाकारं न मुद्रितम् ।
सहसाऽथाद्यतत्पूर्तिः श्रीमता धन्यधीमता ॥४॥
महत्प्रताप युक्तेन नय धर्मयुतेन च ।
सूर्य्यवंशावतंसेन लोकसेवा रतेनच ॥५॥
'दरभंगा' मण्डलस्थेन श्री 'लालपुर' वासिना ।
श्रीमन्पुहुप नारायणरायो भूरिभाग्यवान् ॥६॥
भूतो भुवितस्तस्य पुत्रो जातस्तु तत्समः ।
कीर्ति नारायणोऽस्यापि लीलानाथोह्यभूत्सुतः ॥७॥
लीलानाथस्य च सुतो दुःखिनारायणोऽभवत् ।
अस्यैव पुत्रो वीरश्च श्रद्धावान् धर्म कर्म वित् ।
जातः कल्लरसिंहाख्यो दयालुर्दीनतत्परः ॥८॥
सूर्यवंशोज्वलांकीर्ति प्रकाशार्थ अनेनतु ।
मान्य कल्लरसिंहेन सोत्साहं मुद्रणेऽस्यच ॥९॥
भारं सर्वं प्रसह्याद्य प्रकाशितमिदं मुदा ।
अविघ्नञ्चाधुना कृत्यं सम्पूर्णम्पूर्णताङ्गतम् ॥१०॥

अतएवाद्यतं धीरं वरंदानपरं परम् ।
धरणीधरवेर्या ऽहं धन्यवादं मुदार्पये ॥११॥
तथा कीर्तिश्च दिक्ष्वेषां ततालोके सदोज्वला ।
भवेदिति मुदा ऽभीक्ष्णं प्रार्थये परमात्मनः ॥१२॥
अथापि सह जातीयाः पाठकाः सर्वदावयम् ।
श्रेष्ठ कल्लरसिंहस्य ऋणिनो भूतले सदा ॥१३॥
अतो नारायणंदेवं प्रार्थयामः समृद्धये ।
सदा लोके सुयशसः श्चिरस्थाताः सुधर्मिणः ॥१४॥
धन धान्य कुटुम्बाद्यः सह सौख्य युता मुदा ।
चिराय पुत्र पौत्रादि बृद्धियुक्ता भवन्तुते ॥१५॥
सु श्रीः कल्लरसिंहस्य धर्म बुद्धिश्च बान्धवाः ।
भवेयुर्भक्ति भावाश्च भगवद्भानुवंशजे ॥१६॥
क्व सूर्य्य प्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः ।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम् ॥१७॥

जिस प्रकार सूर्य्यवंश में सब राजा मनु, इक्ष्वाकु आदि जिस सनातनधर्म के पालन करते रहे उसी प्रकार सनातनधर्म के श्रीबाबू कल्लरसिंहजी सर्वदेश में भानसूर्य्य के तद्वत प्रकाश कर रहे हैं और "अवध वंशीय क्षत्रियों" के तो कर्णधार ही हैं । इत्य भी युक्तै अभिधीयते ।





श्रीमान् पुण्यनारायण जी

१ श्रीकीर्तिनारायणजी २ श्री छोटकनजी ३ श्रीकाशीनाथजी

१ श्रीलीलानाथ जी

१ श्रीगुदरजी २ श्रीवचीजी

१श्रीरामलालजी २श्रीदुःखीनारायणजी

१श्रीगोविन्दजी २श्रीपलटजी ३श्रीबुटनजी ४श्रीमंगलजी

हकरू लक्ष्मी लखन जदु

श्रीमतीसूरमादेवीजी

श्रीहृदयनारायणजी श्रीननूजी श्रीहीरारायजी

श्रीचन्द्रदेवजी १ श्रीवासुदेवजी २ राजदेवसिंह

१ श्रीडा० कल्लरसिंहजी २ इन्द्रदेवसिंहजी

जन्म - संवत् १९६७ विक्रमीय



धर्मशील मतिवान अति, बाबू कल्लरसिंह ।
बैठे हैं सुख शांति में, ये पुरुषों में सिंह ।

श्रीमान बाबू कल्लरसिंह जी डाक्टर, गौरीमेरन टोले
लालपुर, पो० कलुआही, जि० दरभंगा (बिहार)
चित्र - संवत् २००१ विक्रमीय

अथ समर्पण पत्रम्

श्रीमान् श्रीराघवेन्द्रस्य वंश जन्मा प्रतापवान् ।
न्याययुक्तो धर्मधीरो भानुवंशावतंशकः ॥१॥
लोकमान्यस्तथा लोके गुणिव्रज प्रशंशितः ।
धर्मावलम्बी राजेन्द्रः सर्वशास्त्रार्थ तत्ववित् ॥२॥
सदाचार परः सर्व धर्म मर्मज्ञ एव च ।
श्रीमन्दुहुर नारायण रायो भूरि भाग्यवान् ॥३॥
भूतो भुवितनस्तस्य पुत्रोजातस्तु तत्समः ।
कीर्ति नारायणो ऽस्यापि लीलानाथोऽभवत्सुतः ॥४॥
लीलानाथस्य च सुतो दुःखिनारायणोऽभवत् ।
अस्यैव पुत्रो वीरश्च श्रद्धावान धर्म कर्म वित् ॥५॥
जातः कल्लरसिंहाख्यो दयालु दानतत्परः ।
सूर्यवंशोज्वलां कीर्तिं प्रकाशार्थं सतांऽस्यतु ॥६॥
मातुः कल्लरसिंहस्य सुरमायाः कराम्बुजे ।
धरणीधराचार्य वर्य्यो ग्रन्थनिर्माण तत्परः ॥७॥
"श्रीसम्प्रदायमीमांसां" श्रद्धयाहं समर्पये ।
सदा साधयितुं बुद्धिं कृतं कर्म कृतार्थितुम् ॥८॥

स्वाम्युपनामकधरणीधराचार्य्य,
उत्तरतोताद्रिमठ, वेंकटेशमन्दिर,
विभीषणकुण्ड, अयोध्या ।

हमारे दो शब्द ।

—:X:—

अखिल कोटि ब्रह्माण्डनायक श्रियः पिता भगवान् परमानन्द ब्रजनन्दन गिरिधारी गोपाल को कोटिशः धन्यवाद है कि जिनकी असीम अनुकम्पा से धर्मोद्धारक श्रीस्वामीजी ने अनेक विघ्न बाधाओं को आनन्द पूर्वक सहन करते हुए बड़ीही योग्यता से इस परम कल्याण कारक ग्रन्थरत्न का संग्रह किया है। इसमें साम्प्रदायिक सिद्धान्त कूट-कूटकर भरे हैं अतः हम परमात्मा सच्चिदानन्द कृपानिधान श्रीकृष्णचन्द्र कन्हैया के पद-पद्म-पराग रज से हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि यह ग्रन्थ गुणग्राही महानुभावों के करकमलों को सुशोभित करते हुए कराभरणवत् परमप्रिये हो तथा ऐसे परोपकारी ग्रन्थ एवं ग्रन्थकर्ता दोनों ही दीर्घायु हों। भगवान् ऐसे ग्रन्थकर्ताओं को आनन्ददायक आरोग्य अमर काय प्रदान करें।

बिना मूल्य वितरण धर्मप्रचारार्थ।

नम्रनिवेदक,

डाक्टर कल्लरसिंह

लालपुर, दरभंगा (मिथिला)

श्रीसम्प्रदायमीमांसा में जिन२ग्रन्थों के नाम आये हैं उनके नाम

१ वेदग्रन्थ—ऋग्वेद १ यजुर्वेद २ सामवेद ३ यजुषिकाठके ४ निघंटु ५ ।

२ उपनिषद्ग्रन्थ—तैत्तरीयोपनिषद् ६ [illegible] महानारायणोपनिषद् ७ ।

३ दर्शनग्रन्थ—जागदीशीसिद्धान्त लक्षण ८ ।

४ सूत्रग्रन्थ—सूत्रगोभिलगृह्य ९ ।

५ व्याकरणग्रन्थ—सिद्धान्तकौमुदी १० पाणिनीयशिक्षा १० ।

६ धर्मशास्त्रग्रन्थ—मनुस्मृति ११ याज्ञवल्क्यस्मृति १२ व्यासस्मृति १२ हारीतस्मृति १२ ।

७ संहिताग्रन्थ-बृहद्ब्रह्मसंहिता १३ अहिर्बुध्न्यसंहिता १४ आदित्यसंहिता १५ गर्गसंहिता १६ अगस्त्यसंहिता १६ भरद्वाजसंहिता १६ वायवीयसंहिता १७ ।

८ इतिहासग्रन्थ—महाभारत १७ बाल्मीकीयरामायण १८ तुलसीकृत रामायण १९ गीतावली २० हनुमानचालीसा २१ शारीरकमीमांसा भाष्य २२ विद्वद्वृत्तम २३ सम्प्रदायवृत्तम् २४ टाडराजस्थान २५ श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर २५ श्रीरामार्चनपद्धति २६ विश्वगुणादर्शचम्पू: २७ श्रीहरीभक्ति सिन्धुजावेला २८ निजगुरु २९ श्रीसम्प्रदायदिक् दर्शन ३० श्रीरामकबीर की पञ्चमात्रा ३१ गतिबोध ३२ श्रीवैष्णवप्रस्थान ३३ श्रीवचनभूषण ३४ भक्तमाल ३५ वैष्णवधर्मरत्नाकर ३६ ।

९ पुराणग्रन्थ—ब्रह्मवैवर्तपुराण ३७ स्कन्दपुराण ३८ पद्मपुराण ३९ आग्नेयपुराण ४० भागवत ४१ ब्रह्माण्डपुराण ४२ मत्स्यपुराण ४३ भार्गवोपपुराण ४४ भारतनिर्माता ४५ कल्याणसंतांक ४६ । १० काव्यग्रन्थ-शिशुपालवध ४७

११ कोष—अमरकोष ४८ विश्वकोष ४९ ।

विशिष्टा द्वैत सिद्धान्त

अथ विशिष्टाद्वैतसिद्धान्त शब्दस्य कोऽर्थः ? कथमस्य यतीन्द्रमतस्य तस्यतच्छब्दे वाच्यत्वम् ? इति चेत् अत्र किं चिदुच्यते सिद्धान्त शब्दः प्रामाणिक तया परिगृहीतार्थवाचि, तदुक्तं न्यायपरिशुद्धे "अथसिद्धान्तः प्रामाणिक इत्यभ्युपगतोऽर्थः" इति न्यायसारे च "प्रमाणिकतयाभीष्टस्सिद्धान्तः त्रिधा मतः" इति। सएवमत शब्दाभीलप्यः। तत्रद्वयोर्भावः 'द्वितैव द्वैतम्" भेदइत्यर्थः न द्वैतमद्वैतम् अभेदः। विशिष्टस्याद्वैतं विशिष्टाद्वैतं स्वव्यतिरिक्तसमस्त चेतनाचेतनविशिष्टं ब्रह्मैकमेव तत्वमिति प्रतिपादनात् रामानुजीयसम्प्रदायविशिष्टाद्वैतसिद्धान्त इति व्यपदिश्यते एतेनेदमपि प्रत्युक्तम् यदुत सूक्ष्मचिदचिद्विशिष्ट ब्रह्मणः स्थूलचिदचिद्विशिष्टब्रह्मणश्चाभेदस्य सिद्धान्तसिद्धतया विशिष्टाद्वैत शब्दस्य विशिष्टयोरद्वैतमिति व्युत्पत्त्यातादृसार्थबोधकत्वम् इति चेतनाचेतनयोश्शरीरत्वे। ततश्चबोधायनेन मुनिना वृत्तिग्रन्थेन विस्तृतः। अथव टङ्कद्रमिडादिभिः 'द्रमिडभाष्यादिषु संक्षिप्तः।

"यस्यात्मा शरीरम्" यस्यपृथिवी शरीम, यआत्मनि तिष्ठन् इत्यादिकाघटकश्रुतिः। याने जीवात्मा और पृथिवी भगवान के शरीर है इसहेतु से विशिष्टा द्वैतसिद्धान्तहुआ। विसेष जानना होतो यतीन्द्रमत दिपीका देखे।

निन्दन्तुनीति निपुणा यदि वास्तुवन्तु लक्ष्मीसमाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्। अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।

स्वाम्युपनामकधरणीधराचार्य।

जन्म – संवत् १९४७ विक्रमीय



पंडित कलानिधान, धरणीधर आचार्य ये।
अवध गती की खान, बैठे सरयूतीर में ॥१॥

चित्र – संवत १९९३ विक्रमीय

"ग्रन्थकर्तृ स्वरूप प्रकाशः"

श्रीकाश्यपान्वयमहोदालवाल सूर्य्यं ।
श्रीवानयोगि चरणाम्बुजभृङ्गराजम् ॥
श्रीमद्यतीन्द्रवर योगि कृपैक पात्रं
वन्दे सदाबुधवरं धरणीधाराय्र्यम॥१॥

तृतीया भरणीतारे चैत्रशुक्लेकृतोद्भवः
जीयात धरणीधर "श्रीमान्" सूर्य्यवंश दिवाकरः २

अद्रि१वेदा४ङ्क९भू१ वर्षे चत्रेशुक्लेकृतोद् भवः ।
तृनीयाभरणीयुक्त जीयाद् धरणीधरसदा ॥३॥

अद्रि१वेदा४ङ्क९भू१ वर्षं चैत्रेयाम्ययुनेसिते ।
धरणीधर संज्ञोऽसौजीयात् सूर्य्यान्वयोद्भवः ॥४॥

पूर्वांदिशांवज्रधरोदक्षिणांपातु ते यमः ।
वरूणः पश्चिमामाशां धनेशस्तूत्तरां दिशम् ॥५॥

ऐन्द्रीमिन्द्रस्तु ते पातु कौवेरीं तु कुवेरकः ।
वारुणीं वरुणः पातु याम्यं पातु सदा यमः ॥६॥

त्रिशिखोऽग्निदिशं पातु त्रेनेत्राः पातुनैर्ऋतम् ।
त्रिगतिर्वायवीं रक्षेदैशानींतु त्रिनेत्रधृक् ॥७॥

स्वस्ति प्रजाभ्य परिपालयन्ताम् ।
न्यायेन मार्गेण मही मही शाः ॥
गो ब्राह्मणेभ्यः सुखमस्तु नित्यम् ।
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥

श्रावण शुक्ल ७ | पं. श्रीनिवासाचार्य्य मो०
सर्वजित् नाम संवत्सर | हसनपुरा पो० फुलवारी

विषय सूचि

श्रीः

श्रीमद्वेंकटेश्वरो विजयतेतराम् ।

श्रीसम्प्रदायमीमांसा

श्रीबालसूर्य्यप्रभाटीकया सहिता ।



लक्ष्मीनाथसमारम्भां नाथयामुनमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य्यपर्य्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥१॥
ध्यायन्नारायणं देवं स्नानादिषु च कर्म्मसु ।
ब्रह्मलोकमवाप्नोति न चेहा वर्त्तते पुनः ॥२॥
श्रावणे कृष्णपक्षे च द्वादश्यां बुधवासरे ।
सम्वत्सरे हेमलम्बे खं खाम्बरं करात्मको ॥३॥
मृगशिराख्ये शुभे भे योगे सर्वार्थसिद्धिदे ।
धरणीधरवर्य्योऽहं श्रीसाकेतपुरीस्थितः ॥४॥
श्रीसम्प्रदायमीमांसां व्यरचम् शास्त्ररीतितः ।
निर्मत्सराः सज्जना ये तेषां सन्तोषदास्त्वियम् ॥५॥
घनान्धकारोपयुते हि लोके जना महामोहविमोहनाप्ताः ।
अधीत्य तूर्णं सुखमेधमाना व्रजन्तु नूनं परमे सुधाम्नि ॥६॥
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्मं वर्णानामनुपूर्वशः ।
कुरुते विदुषां प्रीत्यै ग्रन्थानालोच्य यत्नतः ॥७॥

अर्थ—अनेक आर्षग्रन्थोंके आधारपर श्रुति और स्मृतियों में कहे हुए धर्मों को मनुष्यों के निमित्त कहता हूँ । मुमुक्षुजनों

को भगवत् शरणागति पञ्चसँस्कारयुक्त मन्त्र लेना चाहिए, तथा तप्तमुद्राविजयान्तर्गत श्रीशास्त्र का वचन है कि:—

ताप: पुण्ड्रस्तथा नाम मन्त्रो यागश्च पञ्चम: ।
अमी पञ्चैव संस्कारा: परमैकान्तिनो मता: ॥
*अङ्कनं चोर्द्ध पुण्ड्रञ्च मंत्रो नामविधारणम् ।
पञ्चमो याग इत्युक्ता: संस्कारा: पूर्वसूरिभि: ॥१९॥

इति पद्मपुराण पातालखण्ड अध्याय ८२ ।

प्रथम ताप याने भुजों में तप्त शंख चक्र की छाप संस्कार द्वितीय पुण्ड्र याने उर्ध्व पुण्ड्र तिलक संस्कार, तृतीय भगवन्नाम संस्कार चतुर्थ मन्त्र संस्कार पञ्चम भगवद्भागवताचार्य सेवा उपदेश संस्कार।

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्य ते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वत: ।
अतप्ततनूर्न तदामोऽश्नुते शृता स इद्वहन्त तस्तत्समा शतम् ।

इति ऋग्वेद संहिता अष्टक ७ अध्याय ३ वर्ग ८ ।

पवित्रमित्यग्नि: अग्निर्वै सहस्रार: । सहस्रारो नेमि: नेमिना तप्ततनू: ब्रह्मण: सायुज्यं सलोकतामाप्नोति ॥

इति सामवेदमैत्रायणीये शाखागत श्रुति । यजुर्वेद तैत्तिरीयआरण्यके प्रश्न १ अनुवाक ११ । साम्नि पूर्वार्चिके

---

* शङ्ख चक्र प्रधानं हि सर्वमन्यद् गदादिकम् ।
अंकित: शङ्खचक्राभ्यां सर्वैरङ्कित एव वा ॥६६॥

इति श्रीभरद्वाजसंहितायां न्यासोपदेशो अध्याय ३ ।

प्रपाठक २ मन्त्र १६ यजुषि काठके प्रश्न ३ अनुवाक ३ में शङ्ख
चक्र धारण विधि है, अहिर्बुध्न्य संहिता अ० ३१। उत्तरार्द्धम्।

पवित्र शब्द का अर्थ सुदर्शनचक्र है यथा—

"सुदर्शने च दर्भे च पवित्रं चरणसूत्रके।
सुदर्शनं सहस्रारं पवित्रं चरणं पविः।
सुदर्शनं हरेश्चक्रं पवित्रं चरणं पविः।"

इति वेदनिघण्टु।

ततो दिव्यं च हारिद्रं सहेमतुलसीदलम्।
मंत्रेण धारयेच्चूर्णं ललाटे मस्तके तथा ७८।

इनि भरद्वाजसंहिता अध्याय ३।

ये कंठलग्नतुलसीनलिनाक्षमालाः।
ये वाहुमूलपरिचिह्नितशंखचक्राः।
ये बा ललाटफलके लसदूर्ध्वपुण्ड्राः।
ते वैष्णवा भुवनमाशु पवित्रयंति ७०।

इति पद्मपुराण उत्तरखंड अध्याय २२४।

सूतके प्रेतकार्ये च तैलाभ्यंगे च भोजने।
शयने तुलसीमालामधृत्वैव समाचरेत् ५२।

इति बृहद् ब्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ७।

सूतक में १ प्रेत कार्य में २, तेल लगाने में ३ और भोजन करते समय ४ शयन ५ "सुतने" मे तुलसी की माला न धारण करे।

नोट—पञ्चसंस्कार में माला विधान नहीं है इसी कारण

श्रीरामानुजसम्प्रदाय में तुलसी सब काल धारण नहीं की जाती है, यह तत्त्व है।

कश्यपादि ऋषि नारायण के ही उपासक थे क्योंकि नारद पञ्चरात्र और वाल्मीकीयादि ग्रन्थों से पता लगता है यथा—

धारयिष्ये भुजे दिव्यं वह्निपूतं सुदर्शनम।
वटुको वामनो भूत्वा मेखलाजिनदंडधृत् १०२।
कश्यपादङ्कयित्वा ऽङ्गं करिष्ये देवरक्षणम्।
वशिष्ठमुनिशार्दूला दिलीपप्रमुखा नृपाः १०३।
धारयिष्यन्ति भूलोके महाशस्त्रं सुदर्शनम्।
रामो राजीवपत्राक्षो भूत्वा दशरथात्मजः १०४।
धृत्वा तप्तायसीं मुद्रां देवकार्यं करिष्यति।
परमैकान्तिकं धर्मं वायुपुत्रो महाबलः १०५।
इति नारदपञ्चरात्रे बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद २. अध्याय ७।

अर्थ—दिव्य सुदर्शनचक्र को अग्नि में तपा कर भुजाओं में धारण करै, कि जिसको मेखला "करधनी" अजिन "मृगछाला" और दण्ड "हाथ में गहने की छड़ी" धारण करनेवाले बटुक "वामन" ने धारण किया है १०२।

सुदर्शनचक्र को कश्यपादि ऋषियों ने अपनी भुजाओं में धारण कर देवताओं की रक्षा की पुनः मुनियों में सिंह के तद्वत वशिष्ठमुनि और महाराज दिलीप ऐसे प्रमुख "प्रधान" २ राजा चक्रांकित थे १०३।

राजीवलोचन दशरथ महाराज के पुत्र श्रीरामचन्द्रजी ने

इस पृथ्वी के ऊपर महाशस्त्र सुदर्शनचक्र को धारण किया "यहाँ पर तप्त चक्र का ही प्रसङ्ग है" १०४।

महाबली हनुमानजी ने भी तप्त चक्रमुद्रा को धारण कर देवताओं का कार्य किया सुदर्शनचक्र की तप्त चक्र मुद्रा को धारण करना श्रेष्ठ धर्म है १०५।

श्रीमद्भागवत स्कन्द ९ अध्याय १ के अनुसार नारायण से वाल्मीकिजी के मतसे विष्वकसेन उनसे १ मरीचि २ कश्यप ३ कश्यप के पुत्र वामन, और वामन को कश्यपजी ने यज्ञोपवीत के समय पञ्चसंस्कार युक्त चक्रांकित किया फिर नारायणमन्त्र उपदेश किया।

महर्षि वशिष्ठ जी से दिलीपमहाराज ने कहा कि सब-धर्मों में श्रेष्ठधर्म कौन है वह आप कृपाकर यह कहिये मुझे यह सुनने की इच्छाहुई है यथा—

सर्वेषामेव मन्त्राणां मन्त्ररत्नं शुभावहम्।
सकृत्स्मरणमात्रेण ददाति परमं पदम्॥२२॥
मन्त्ररत्नं द्वयं न्यासं प्रपत्तिः शरणागतिः।
लक्ष्मीनारायणन्ह्येति मन्त्रः सर्वफलप्रदः॥२३॥
तस्मात्त्वमपि राजर्षे! विष्णुसायुज्यमिच्छसि।
दीक्षामार्गविधानेन धारयित्वा सुदर्शनम्॥७२॥
तत्त्वं नारायणो× विष्णु र्वासुदेवः सनातनः।

× नारायण शब्द का पर्य्याय—

विष्णुर्नारायणः कृष्णो वैकुण्ठो विष्टरश्रवाः।
दामोदरो हृषीकेशः केशवो माधवः स्वभूः ३५।

परमात्मा परब्रह्म परज्योतिः परात्परः ॥१५॥

इति पद्मपुराणे उत्तरखण्डे अध्याय २२३ और २२४–२२५।

अर्थ—सम्पूर्ण परालौकिक पथ एवंदिव्यधाम तथा भगवान् को प्राप्त करानेवाले मंत्रों में शुभकरने वाले मंत्रों में परम श्रेष्ठ यह नारायण मन्त्र एक वार के ही स्मरण करने से मोक्ष स्थान देने वाला है। २२। जो इसमन्त्र राजको द्वयमन्त्र को शरणागति होकर प्राप्त करता है वह परमप्राप्य श्रीलक्ष्मीनारायणजी को प्राप्त होता है क्योंकि यह मन्त्र समस्त फल को देता है २३। इसलिये हे राजऋषे तुमभी विष्णु भगवान् की प्राप्ति चाहते हो अतः दीक्षा लेकर गुरुद्वारा शंखचक्र धारण कर श्रीवैष्णव हो ओ॥ ७२॥

दैत्यारिः पुण्डरीकाक्षो गोविन्दो गरुड़ध्वजः।
पीताम्बरोऽच्युतः शार्ङ्गी विष्वक्सेनो जनार्दनः ३६।
उपेन्द्र इन्द्रावरजश्चक्रपाणिश्चतुर्भुजः।
पद्मनाभो मधुरिपुर्वासुदेवस्त्रिविक्रमः ३७।
देवकीनन्दनः शौरिः श्रीपतिः पुरुषोत्तमः।
बनमाली बलिध्वंसी कंसारातिरधोक्षजः ३८।
विश्वंभरः कैटभजिद्विधुः श्रीवत्सलाञ्छनः।
पुराणपुरुषो यज्ञपुरुषो नरकान्तकः ३९।
जलशायी विश्वरूपो मुकुन्दो मुरमर्दनः।
वसुदेवोऽस्य जनकः स एवानकदुन्दुभिः ४०।

इति अमरकोषे काण्डे १ स्वर्गवर्ग। और महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय १४९ में नारायण के हजार नाम जो कि विष्णुसहस्रनाम कहा जाता है।

वह परब्रह्म परमात्मा श्रीमन्नारायण ही परतत्व है विष्णु है वायुदेव सनातन वो परज्योति व सबसे परे है परमात्मा है समस्त देवाधिदेव है इसीकी शरण से सर्वश्रेष्ठ होता है ॥१५॥

इसी प्रकार वशिष्ठमुनि सब सूर्य्यवंशीय राजाओंको यज्ञोपवीत के समय ही पञ्चसंस्कारयुक्त चक्रांकित और नारायण मन्त्रोपदेश करते थे, यह वंशपरम्परा से चला आता है और अपने अनुचरों को भी चक्रांकित कराते थे श्रीरामचन्द्रजी नारायण के उपासक थे यथा:—

गते पुरोहिते रामः स्नातो नियतमानसः ।
सह पत्न्या१ विशालाक्ष्या नारायण२ मुपागतः १ ।
प्रगृह्य शिरसा पात्रं हविषो विधिवत्ततः ।
महते दैवतायाज्यं जुहाव ज्वलितानले २ ।
शेषं च हविषस्तस्य प्राश्य शस्यात्मनः प्रियम् ।
ध्यायन्नारायणं देवं स्वास्तीर्णे कुशसंस्तरे ३ ।
वाग्यतः सह वैदेह्या भूत्वा नियतमानसः ।
श्रीमत्यायतने विष्णोः शिश्ये नरवरात्मजः ४ ।

इति वाल्मीकीय रामायणे अयोध्याकाण्डे सर्ग ६ ।

इति स्कन्दपुराणे रेणुकामाहात्म्ये सह्याद्रिखण्डे अध्याय ३ ।

---

१ श्राद्धे यज्ञे विवाहेच पत्नी दक्षिणतः सदा १३७ इति धर्मशास्त्र अत्रिस्मृति । अर्थ—श्राद्ध यज्ञ तथा विवाहके समयपत्नी सदा पति के दाहिने तरफ बैठती है १३७ । रामस्य दक्षिणे पार्श्वे पद्मा श्रीः समुपाश्रिता ६ । सर्वेषु शुभ कार्येषु पत्नी तिष्ठति दक्षिणे ।

इति वाल्मीकीयरामायणे उत्तरकाण्डे सर्ग १०८ ।

अर्थ-पुरोहित के जाने पर श्रीरामचन्द्रजीने सावधान चित्त से स्नान किया और विशालाक्षी स्वपत्नी श्रीजानकीजी के सहित नारायण के समीप गये १। प्रथम खीर के पात्र को नमस्कार कर विधि पूर्वक महान् देव नारायण के लिए प्रज्वलित अग्नि में आहुति देने लगे २। जब थोड़ी सी खीर रह गई तो उसे भोजन कर श्रीनारायण देव को ध्यान करते हुए कुशाशन पर मौनव्रत धारण किया श्रीजानकीजी के साथ नियत मन से श्रीविष्णु भगवान् के मन्दिर में श्रीदशरथराजकुमार रामचन्द्रजी ने शयन किया ४।

ग्यारह हजार वर्ष तक, इस लोक में रहकर फिर श्रीरामचन्द्रजी नारायणरूपमें मिल गये और श्रीहनुमानजी रामचरित्र सुनने के लिए इस मृत्युलोक में रह गए, यह वाल्मीकीयादि ग्रन्थों से पता चलता है।

नं० १ प्रथम तो श्रीरामचन्द्रजी ने हनुमान्जी को शिष्य करने की आज्ञा नहीं दी, यदि देते तो नारायणमन्त्र देने की आज्ञा देते क्योंकि वह नारायण उपासक थे।

नं० २ हनुमानजी का तिर्यक्योनि में उत्पत्ति होने से ब्राह्मणादि मनुष्यों को शिष्य करने का अधिकार ही नहीं है।

नं० ३ हनुमानजी कहीं पर केसरीनन्दन, कहीं पर शंकर सुवन और कहीं पर मारुतात्मज कहाते हैं यह कौन वर्ण कहायेंगे इस विषम समस्या को हल कर देना परमावश्यक है। उदाहरण द्वारा बता देना परमावश्यक है यथा—जय हनुमान ज्ञान गुण सागर। शङ्कर सुवन केशरी नन्दन। श्रीहनुमानचालीसा १।

एवं ब्रुवंतं धर्मात्मा हनुमंतं स लक्ष्मणः।
प्रतिपूज्य यथान्यायमिदं प्रोवाच राघवम् ३०।
कपिः कथयते हृष्टो यथाऽयं मारुतात्मजः।
इति श्रीवाल्मीकीय रामायणे किष्किन्धाकांडे सर्ग ४।
तां तु रामकथां श्रुत्वा वैदेही वानरर्षभात्।
क्व ते रामेण संसर्गः कथं जानासि लक्ष्मणम् २।
एवमुक्तस्तु वैदेह्या हनुमान्मारुतात्मजः।
ततो रामं यथा तत्त्वमाख्यातुमुपचक्रमे ५।
इति श्रीवाल्मीकीय रामायणे सुंदरकांडे सर्गः ३५।

यह सिद्ध होगया कि श्रीहनुमानजी नित्य कोटि में नहीं हैं। श्रीहनुमानजी के आदेश पर ध्यान देवें यथा—

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम। मा० रा० दो० ६।
कहहु कवन मैं परम कुलीना। कपि चंचल सबही विधि हीना॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा । तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा॥
अस मैं अधम सखा सुनु मोहूँ पर रघुबीर ।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे विलोचननीर ७॥
इति—रामचरितमानस सुन्दरकांड।

विज्ञपाठक सब ध्यान देकर विचार करैं, तत्त्व क्या है? नूतन परम्परावाले महात्मा सीताजीका शिष्य हनुमानजीको बताते हैं, सीताजी कहती हैं कि तुम कौन हो रामजीको तुमने कैसे जाना मैं तुम्हें नहीं जानती हूँ अब विचारैं, न कोई गुरु न कोई चेला।

श्रीहनुमानजी का स्वरूप और रूपवर्णन-श्रीगोस्वमीजी का

आदेश, "जेहि सरीर रति रामसों सोइ आदरै सुजान। रुद्रदेह तजि नेहबस बानर भे हनुमान" १४२ इति दोहावली श्रीतुलसीदासका आदेश है कि श्रीहनुमानजी रुद्रदेहत्याग कर वानर रूप को धारण किया, बानररूप त्याग करेंगे तब कारणरूप जो रुद्र है उनमें लीन होयँगे, यह तत्व है। यथा-रुद्र का स्वरुप वर्णन नारायणादेकादश रुद्राश्च जायंते। नारायणात्सर्वेदेवाश्चजायन्ते ६०। इति त्रिपाद्विभूति महानारायणोपनिषद् अध्याय २ पंक्ति ६३

अर्थ—नारायण से ग्यारह रुद्र पैदा होते हैं नारायण से सब देवता पैदा होते हैं ६०।

अशुद्धा ब्रह्मरुद्राद्या जीवा विष्णोर्विभूतयः १८।

इति भारद्वाजसंहिता परिशिष्ट अध्याय १।

श्रीहनुमानजी श्रीरामजीकी आज्ञाके बिना यह अनर्थ कदापि नहीं कर सकते हैं क्योंकि

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो हतोऽवधीत १५।

इति—मनुस्मृति अध्याय ८।

अर्थ—नाश किया हुआ धर्म नाश करता है और रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करते हैं। नष्टधर्म हमको नष्ट न करै इस कारण धर्म को कभी नष्ट नहीं करना चाहिये, यह मनुमहाराजका आदेश है १।

नं० ४ चक्रकादिप्रसंगइति। संसर्गाभावत्वघटितनिरुक्तव्याप्तिघटितजन्यतावटितत्वरूपापादकेन स्वस्मिन् स्वभिन्नत्वापादानप्रसंग इत्यर्थः, तथा चोक्त प्राचीनैः "स्वाज्ञानसापेक्ष, ज्ञानसापेक्ष,

ज्ञानसापेक्ष, ज्ञानविषयत्वेन स्वभिन्नत्वापादनं चक्रकप्रसंग"। इति जागदीशी सिद्धान्तलक्षणम् १०७ पृष्ठः।

राममन्त्रस्य वशिष्ठज्ञानसापेक्षत्वेन तस्य च ब्रह्मादिद्वारा रामज्ञानस्याऽपेक्षतया आत्माश्रयान्योन्याश्रय चक्रकादि दोषाः यथासंभवं दुर्वाराःस्युः। वशिष्ठस्य रामगुरुत्वे बहुशास्त्रप्रमाणतया अन्यथात्वेन शास्त्रबाधप्रसंगः।

याने—श्रीरामजी ने वशिष्ठजी से राममंत्र की अपेक्षा की, वशिष्ठजी ने ब्रह्माजी से राममंत्र की अपेक्षा की, ब्रह्माजी ने हनूमान्‌जी से राममंत्र की अपेक्षा की, हनूमान्‌जी ने श्रीसीताजी से राममंत्र की अपेक्षा की, श्रीसीताजी ने श्रीरामजी से राममंत्र की अपेक्षा की और फिर श्रीरामजीने वशिष्ठजीसे राममंत्र की अपेक्षा की, इसीको चक्रकदोष कहते हैं। क्या साक्षर का राक्षसा नहीं हो सकता।

वेद लोकादि में अनेक प्रमाण हैं कि माधुर्य अर्थात् लीला-विभूति में श्रीरामजी के गुरु वशिष्ठजी हैं अत एव चक्रकदोष है। यदि ऐश्वर्य्य (त्रिपाद्विभूति) विभूति में गुरु शिष्य का संबंध कहेंगे तो वहां तो भोगमात्र* है कर्म नहीं है वहां कौन किसका

* जगद्व्यापारवर्जं प्रकरणादसन्निहितत्वाच्च ।४।४।१७।

जगद्व्यापार:—निखिलचेतनाचेतनस्वरूपस्थिति प्रवृत्तिभेद नियमनम्। तद्वर्जं निरस्तनिखिलतिरोधानस्य निर्व्याजब्रह्मानुभवरूपं मुक्तस्यैश्वर्यम् कुतः ? प्रकरणात्—निखिलजगन्नियमनं हि परं ब्रह्म प्रकृत्याऽम्नायते"यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जाता-

गुरु वा चेला है। माधुर्य्यमें ही मंत्रजाप पूजा या पाठ जो होता है वहीं के वास्ते। यदि श्रीरामजी को वशिष्ठजीने मंत्र दिया तो ब्रह्मा जी रामजी के दादागुरु हुए और वशिष्ठजी के पिता ब्रह्माजी हैं हीं अतएव यह जो वैरागियोंने विना सोचे विचारे नकली गुरु परंपरा बनाई है वह अनरगल है। जबतक कि मनुष्य विद्यातप और विचार से युक्त न होगा तवतक धर्म क्या है इसका जानना कठिन है। अब हनूमान्जी ने ब्रह्माजी को मंत्र दिया फिर इनकी सूधी बुद्धि उल्टी होगई, जबतक मनुष्य के ज्ञानकी ओर वे नहीं होतीं तवतक उल्टे को सीधा मानता है। वेद शास्त्र का विचार ही ज्ञान है, यदि दोनोंका विचार नहींहै तो अंधा × है और एकका विचार है तो काना है अतएव अंधा वा काना साधु वृत्तिका नहीं होसक्ता नीति में भी ऐसाही लिखा है कि—क्वचित्काणा भवेत्साधुः क्वचित् गानवती सती। क्वचिदंतालकोमूर्खः क्वचित्खल्वाट निर्धनः ॥ काने खोरै कूवरे कुटिल कुजाति जान १४ इति तुलसीकृतरामायण कैकई मंथरा संवाद अयोध्याकांड।

नि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासतद्ब्रह्म"—२ तै० भृगु० १—अनु ॥

"सदेव सोम्येदम्र आसीदेकमेवाद्वितीयं तदैक्षत बहुस्यां प्रजायेयेति तत्तेजोऽसृजत" ३, छा, ६-२-१। इति श्रीशारीरकमीमांसा भाष्ये जगद्व्यापारवर्जाधिकरणम् अध्याय ४ पाद ४ सूत्र १७।

× श्रुतिस्मृति च विप्राणां चक्षुषी देवनिर्म्मिते। काणस्तत्रैकया हीनो द्वाभ्यामन्धः प्रकीर्तितः २५इति हारीतस्मृतिअध्याय १।

यह जो १९७७ विक्रमीय संवत् से आज नूतन रामानन्द सम्प्रदाय निर्मित हुआ है वह वन्ध्यापुत्र सरीखा बुद्धिस्थ है।

इनके प्रवर्तक कोई हनुमान् नामक बन्दर हो या मनुष्य कल्पना किया हो, इसी प्रकार ब्रह्मा, वशिष्ठ आदि सब नाममात्र है, यह सर्वथा निर्मूल है, इस पर बहुत विचार करना आवश्यक नहीं है।

सम्पादक स्वामी श्रीभगवदाचार्य के तत्त्वदर्शी विशेषांक वर्ष ८ अङ्क ८-९ में पृष्ट ३८ से ४९ तक में, आनन्दभाष्य का खण्डन है। लेखक पण्डित श्रीरावचरणशरणजी शास्त्री हैं। पृष्ठ ४३ में लिखा है कि श्रीभाष्य लिखा जा चुका था। अन्य सैकड़ों ग्रन्थ विशिष्टाद्वैत समर्थन के लिए उस समय उपस्थित थे। सैकड़ों विद्वान् इस मत के समर्थक थे। श्रीरामानुज सम्प्रदाय ने जिस विशिष्टाद्वैत का प्रचार किया है वह तो दक्षिण प्रदेश में भी है और उत्तर भारत में भी है। पृष्ठ ४९ में लिखा है कि— आप जिस आनन्दभाष्य की बात करते हैं वह तो वस्तुतः उसी जानकीभाष्य और श्रीभाष्य की चोरी करके आपका लिखा हुआ है। यह रघुवरदास वेदान्ती को कहता है, प्रकरण देखो—

"रामानन्दी परमहंस जानकीवल्लभदासजी अपने बनाये गतिबोध उत्तरार्द्ध जो प्रथमबार छपा है, पृष्ठ २०१ पंक्ति १५ से लिखते हैं कि, रामानुजस्वामी के श्रीभाष्य को खंडन कर ब्रह्मसूत्र पर रामानन्दभाष्य और जानकीभाष्य झूठे ही रच कर छपा दिया जो इस वक्त दोनों भाष्य चालू हैं और इस वक्त रामानन्दभाष्य

आपस में तकरार होने से खंडन भी कर दिया गया।" इसी रामानन्दभाष्य का नाम आनन्दभाष्य है। सम्पादक स्वामी श्री भगवद्दाचार्य अपने तत्वदर्शी विशेषांक जो वर्ष ८ अङ्क ८-९ के पृष्ठ ५४ पटली दूसरी के (३) नंबर में लिखते हैं कि, "मैं कथित आनन्दभाष्य का कर्ता हूँ इस प्रकार से शिंगड़ा के महन्तजी का जो पत्र मेरे पास उपस्थित है उसमें लिखा है"। उक्त दो प्रमाणों से पता लगता है कि आनन्दभाष्य रघुवरदास शिंगड़ा के महान्त का लिखा है यहां वहां से लेकर। इससे जो नकली परम्परा बनानेवाले हैं उनसे कैसे किसीको विश्वास होगा।

हा सोच है कि पन्थाई चर लोग भी स्वतन्त्र श्रीसम्प्रदायाचार्य बनने के लिए अनेक प्रयत्न कर रहे हैं।

श्रीरामानन्दस्वामीजी तो श्रीरामानुजसम्प्रदाय में हैं ही इसमें कई ग्रन्थ प्रमाण में हैं बहुत स्थलों में लिखा है। मेरठ से प्रकाशित "संकीर्तन" वर्ष ७ के अवताराङ्क के पृष्ठ २८४ में कल्पित त्रिदण्डीचित्र श्रीरामानन्दस्वामीजी का दिया है, उसीके नीचे छपा है कि "शब्दाद्वैत सम्प्रदायाचार्य"।

श्रीभाष्य और श्रीरामानुजस्वामी का चित्र श्रीरामानुज सम्प्रदाय में तो मान्य है ही सब सम्प्रदायवाले मानते हैं, किसीने अबतक विरोध नहीं किया है। महामहोपाध्याय श्रीयुक्तानन्तकृष्ण शास्त्रीजी ने श्रीरामानुजस्वामी के श्रीभाष्य को माना है। इसपर उन्होंने विचार भी किया है।

"श्रीसम्प्रदाय" पुस्तक पृष्ठ १ और २४ में लिखा है कि

४३ दिन कलियुग के बीतने पर शठकोपादि* निकृष्ट शूद्रजाति परिगृहीत होने से नारायणमन्त्रोपासकोंके पन्थ को सम्प्रदाय कहना तो दूर और महाभूल की बात है, उसे तो सनातनधर्म में स्थान भी नहीं दिया जा सकता है।

महासयजी। आप के मत से तुल्सीकृत रामायण चण्डाल परिगृहीत होनेसे राममन्त्रो "मंत्रराजो" पासकों के सनातन धर्ममें स्थान भी नहीदिया जा सकता है, क्योंकि—

संभु१ कीन्ह यह चरित सुहावा। बहुरि कृपा करि उमहि सुनावा।
सोइ सिव कागभुसुंडि दीन्हा राम भगत अधिकारी चीन्हा ॥
तेहिसन जागबलिकपुनिपावा। तिन्ही पुनि भारद्वाज प्रति गावा ३०
बायसइव सबही तेडरही । सपदिहोहि पच्छी चंडाला ११२।
राम बसहु तिन्ह के मन मामीं। मंत्रराजु नित चपहि तुम्हारा "॥

इति–रामचरितमानस बालकांण्ड दो० ३०।उत्तरकाण्ड दो० ११२। अयोध्याकांण्ड दो० १२९

याने सिवजी ने कागभुसुंडि "चंडालपच्छी" की 'रामायण और "राममंन्त्र" की उपदेसकिया कागभुसुंडिजी ने जागबलिकजी

---

* जीव तीन प्रकार के होते है—बद्ध, मुक्त, नित्य। अतएव श्रीशठकोपस्वामी नित्य जीव हैं।

१—शंभुरीशः पशुपतिः शिवः शूली महेश्वरः ५९।इतिअमरकोष काण्ड १ याने यह "राममन्त्रराज" शूलि सेचला वह कागभुसुंडि द्वारा प्रचलितहुआ। इसहेतु से "श्रीसम्प्रदाय" के ग्रन्थकरता हास में आजावे नं० १ एक तो शूली सम्प्रदाय में है, नं० २ चंडालमाह्य मंत्र होने से, इने श्रीसम्प्रदाय में मानना उपहास्य है।

को रामायण राममन्त्र उपदेसकिया। जागबलिकजी ने भारद्वाजजी को "रामायण राममन्त्र को उपदेसकिया।"इस प्रकार राममंन्त्र की परम्परावलि है। विज्ञपाठगण ध्यानदे विचारे तत्वक्या है। श्रीतुलसीदासजी श्री रामानन्दस्वामी की सिष्य पर सिष्य में है और श्रीरामानन्द स्वामीजी श्रीरामानुज सम्प्रदाय की सिष्य परंपरा में हैं। इसहेतु से आप ने सबोंपर एकहीवार धावाबोलदिया। यहआप हीके सोभादेता है। क्योंकि आपने अपना के वैरागी जाति कवुल करलिया है।

इसका उत्तर सप्रमाण, उदाहरण द्वारा प्रकाश करते हैं सावधान हो विचार करेंगे। यह श्रीसम्प्रदाय श्रीनारायण द्वारा श्रीजीको तथा उनके द्वारा विष्वकसेनजी को नारायणमन्त्र मिला, विष्वकसेनजी नित्यकोटि में हैं, भगवान् की इच्छानुकूल अवतार धारण करते हैं यथा—

१ "विष्वक्सेनादिभिर्भक्तैः शठारि प्रमुखैर्द्विजैः" इत्यादि पञ्चरात्रे बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ७। आंजनेयपंथ वालों

श्रीवैष्णव-प्रस्थान

१ लेखक—श्री १००८ आचार्यपीठाधिपति श्रीराघवाचार्य स्वामीजी महाराज, प्रथम संस्करण "१९४४ ई०" पृष्ठ ६ से उद्धृत।

द्रविड़वेद—निम्नलिखित दिव्य आत्माओं द्वारा यह वेद प्रकट हुआ है।

मेरो सम्पूर्ण गुरुपरम्परा। नारायण १ महालक्ष्मी २

का कहना है कि सत्ययुग से कलि तक दो आचार्यों का नाम है और तो है नहीं, यहां पर इन्हें "तुष्यतु दुर्जनन्याय" के अनुसार समाधान कर देते हैं नं० १ उदाहरण, श्रीचक्रवर्ती श्रीदशरथजी महाराज के ६०००० साठहजार वर्ष बीतने पर श्रीरामचन्द्रजी का जन्म हुआ था, इससे आप सरीखे बालक प्रश्न करें कि साले, साल पर श्रीदशरथ जी के पुत्र क्यों न होते थे; यह आप ही को

विश्वक्सेन ३ मरीचि ४ कश्यप ५ वामन ६ वशिष्ठजी से दो शाखायें चलीं उन्हीं के द्वारा सूर्य्यवंश में, महाराजमनु, इक्ष्वाकु, दिलीप, श्रीरामचन्द्र इत्यादि सब राजा नारायण के उपासक थे, ब्रह्मऋषियों में वशिष्ठ, व्यास, बोधायन इत्यादि हुए यहां पर सबका नाम नहीं दिया जाता है केवल कर्म दिखाया गया है। विशेष जानना हो तो बृहद्ब्रह्मसंहिता आदि ग्रन्थ देखें सर्वत्र मिलेगा। और वाल्मीकीय रामायण अयोध्याकांड सर्ग ६ और सर्ग २०। स्कन्दपुराण रेणुका माहात्म्ये सह्याद्रि खण्ड अध्याय ३ देखो।

१ श्री सरोयोगी	५ श्रीमधुरकवि	९ श्रीगोदा
२ श्री भूतयोगी	६ श्रीशठकोप	१० श्रीभक्तांघ्रिरेणु
३ श्री महायोगी	७ श्रीकुलशेखर	११ श्रीमुनिवाहन
४ श्री भक्तिसार	८ श्रीविष्णुचित्त	१२ श्रीपरकाल

इनका अवतारकाल कलियुग के पूर्व लगभग एकहजार वर्ष से लेकर कलियुग के लगभग चारसौ वर्ष बीतने तक है। इनकी अवतार स्थल की महिमा श्रीमद्भागवत पुराण में है।

शंका हो सकती है। विष्वक्सेनजी अनेक रूप से एक काल में रहते हैं, उदाहरण जैसे—

नं० २—सौभरी ऋषि ने एक ही कालमें पचासरूपधारण कर लिए थे। उसी रूप से सततकाल पचासों रूपों में रहते थे।

श्रीविष्वक्सेनजी अभी हैं और सततकाल में रहेंगे, तब कैसे कलि से पंथ कहा जायगा। इससे आपकी कल्पना निर्मूल होगयी और श्रीसम्प्रदाय अनादि सिद्ध होगयी।

गीताप्रेस गोरखपुर, कल्याण, संत अंक श्रावण १९९४ का छपा पृष्ठ ४२०। लेखक वी० आर० रामचन्द्र दीक्षित एम० ए० लिखते हैं कि—शठकोपके पिता का नाम, कारिमारन था ये पांड्य देश के राजा के यहां किसी ऊँचे पद पर थे "ऊँचा पद मन्त्रीको ही होता है, और आगे चलकर कुरुगैनाडुनाम के छोटे राज्य के राजा होगये हैं वो पाण्ड्यदेश के ही आधीन थे। शास्त्र में लिखा है कि मन्त्री पद का अधिकर ब्राह्मण हीका हैं, उदाहरण द्वारा बतायेदेते हैं, ध्यान देवें।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः ।
स्वंस्वं चरित्रं शिक्षरेन्पृथिव्यां सर्वमानवाः २०।

कलौ खलु भविष्यन्ति नारायणपरायणाः।
क्वचित् क्वचित् महाराज द्रविडेषु च भूरिशः ३८।

इति श्रीमद्भागवत स्कन्द ११ अध्याय ५।

पृष्ठ १५ में लिखा है कि—श्रीरामानन्द के शिष्य परम्परागत श्रीवैष्णवगण श्रीरामानुजसम्प्रदाय में अपना स्वतन्त्र स्थान रखते हैं।

सर्वेषांतु विशिष्टेन ब्राह्मणेन विपश्चिता ।
मंत्रयेत्परमं मंत्रं राजा षाड्गुण्यसंयुतम् ५८।
इति—मनुस्मृति अध्याय २ और

सर्वं लक्षणलक्षण्यो मंत्री राज्ञस्तथा भवेत् ।
ब्राह्मणो वेदतत्त्वज्ञो विनीतः प्रियदर्शनः ४ ।
इति—विष्णुधर्मोत्तरे

मंत्रिभिः सह धर्मात्मा सर्वैरपि कृतात्मभिः ।
सुयज्ञं वामदेवं च जाबालिमथ काश्यपम् ६ ।
इति—वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग ७ ।

क्रूरे कलियुगे प्राप्ते नास्तिकैः कलुषी कृते ।
विष्णोरंशात्स सम्भूतो वेदवेदान्ततत्त्ववित् १।
स्तोत्रं वेदमयं कर्तुं द्राविडस्य च भाषया ।
उत्पत्स्यति सतां श्रेष्ठो लोकानां हितकाम्यया १।
मद्भक्तः शठकोपार्यो भविष्यति मदिच्छया ।
ताम्रपर्णीनदीतीरे यत्र धात्रार्चितोस्म्यहम् ३।
तत्र विप्रकुले कश्चिद् विष्णोरंशात्स सम्भवः ।
शठकोप इति ख्यातो महायोगी भविष्यति ४ ।
इति —पद्मपुराण २–४ और ब्रह्माण्डपुराण ।

वृषभे तुविशाखायां कुरुकापुरिकारिजम् ।
पांड्यदेशे कलेरादौ शठारिं सैन्यपं भजे, १७।
इति वार्त्तामाला नारायण प्रेस प्रथमवार संवत् १९९४।

क्षमा दया च विज्ञानं सत्यञ्चैवादमः समः ।
अध्यात्मनिरतः ज्ञानमेतद् ब्राह्मणलक्षणम् २७।
इति—कूर्म पुराण उत्तरार्द्ध अध्याय २५।

सर्वेप्रत्यक्ष धर्माणो जितक्रोधजितेन्द्रियाः ।
दयास्थिताश्च सर्वे ते हिंसाभेदविवर्जिताः ।

इति—महाभारत आश्वमेधिक पर्व अध्याय ९२।

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शिनः २९।

इति—श्रीमद्भगवतगीता अध्याय ६।

तपोधनं ब्राह्मणानां

इति— ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपति खंड अध्याय ३५।

सर्वमात्मनिसंपश्येत्सच्चासच्च समाहितः ।
सर्वं ह्यात्मनि संपश्यन्धर्मे कुरुते मनः ११८।

इति—मनुस्मृति अध्याय १२।

ब्रह्मचर्यं तपः शौचं संतोषो भूतसौहृदम् ४३।

इति—भागवतस्कन्द ११ अध्याय १९।

तपस्वी तापसः पारिकांक्षी वाचंयमो मुनिः ४२।

इति—अमर कोष, ब्रह्मवर्ग, कांड २

श्रीसम्प्रदाय के ग्रन्थकर्ता का उद्देश है कि बोधायनही पुरुषोत्तमाचार्य नाम से प्रसिद्ध हैं यह उनकी कल्पना निर्मूल है क्योंकि बोधायन और पुरुषोत्तम में राशि भेदात गगन सुमना दिवत् उदाहरण × भवदेव १ सम्प्रदायी नाम भगवदास २

× १ मातृ देवो भव, पितृ देवोभव, आचार्य देवोभव इति तैत्तिरीयोपनिषद अनुवाक ११ मंत्रर २ । जोपिता नामरखता है उसके आदि अक्षर रहता है

इत्यादि, श्रीसम्प्रदाय में दीक्षादेते समय राशि, नाम के साथ ही दिया जाता है।

श्रीअयोध्याधाम से "संस्कृतम्" नामक पत्र के सम्पादक श्रीकालीप्रसाद शास्त्री जी ने "विद्वद्वृत्तम्" नामक ग्रन्थ में भाग १ और २ में लिखा है भाग १ पृष्ठ १८१। दूसराभाग पृष्ठ १७।४६ १३९।१९० में ५ पुरूषोत्तमाचार्य लिखा है, कि

नं० १—उक्त पुस्तक पृष्ठ १८१ में अयं ख्रिस्तस्य द्वादश्यां शताब्द्यामुत्पन्नः। अस्य ग्रन्थो वेदान्तमञ्जूषा प्राप्यते। अयं द्वैतसम्प्रदाय उक्तः।

नं० २ पृष्ठ १७ ख्रिस्त के १२ बारहवें शताब्दि में उत्पन्न हुआ था यह नदिया के राजालक्ष्मणसिंह की सभाका पंडित था और इसने पाणिनीय कृत अष्टाध्यायी के सूत्रोंपर वृत्ति लिखी थी।

नं० ३ पृष्ठ ४६ कलिङ्गदेश का राजा क्षत्रिय था जिसकी राजधानी कटक थी इसने "विष्णुभक्तिकल्पलता" नामक ग्रन्थ लिखा था।

नं० ४ पृष्ठ १३९ बल्लभमतावलम्बी बिठ्ठलनाथदीक्षित के पुत्र बालकृष्ण की चौथी पीढ़ी में ख्रिस्त के अठारहवें शतक में पुरुषोत्तमाचार्य उत्पन्न हुआ था इसने अणुभाष्य की टीका भाष्य-प्रकाश, बिठ्ठलनाथकृत विद्वन्मण्डन की टीका स्ववर्णसूत्र और प्रस्थान इलाकर बनाया था।

नं० ५ पृष्ठ १९० यह पुरुषोत्तमाचार्य १९८२ विक्रमाब्द में

रहा। यह पांचों ८०० वर्ष के भीतर ही हैं। अब "बोधायन" ऋषिजी के विषय में सप्रमाण दिग्दर्शन कराते हैं सावधान हो पढ़ेंगे

नं० ६ "विद्वद्वृत्तम्" भाग १ पृष्ठ ३४-३५ श्रूयते ब्रह्मसूत्राणामुपरि वृत्तिरासीदस्य यस्या उद्धारो रामानुजाचार्येण कृतः, वेदान्तशंकरभाष्यानुवादभूमिकायां, डा० थीवो महाशयस्याप्ययं विचारः। इयं बोधायनवृत्तिः, कृतकोटिनाम्न्यासीदिति प्रपञ्च हृदये। श्रीरामानुजाब्द ९७६ बीत रहा है "सं० २०००"।

नं० ७ कल्याण—पृष्ठ ४३३ संतांक में लिखा है कि प्रथम श्रीरामानुजाचार्य १ श्रीमध्वाचार्य २ श्रीनिम्बार्काचार्य ३ श्रीवल्लभाचार्य्य ४ की गणना की है, और चार सम्प्रदाय के साथ श्रीरामानन्दस्वामीजी की गणना नहीं की। फिर भी इसी पुस्तक के पृष्ठ ४४४ में श्रीरामानन्दस्वामीजी की और श्रीकबीरजी की एक साथ गणना की है, इसपर महानुभाव विचार करें क्या तत्व है।

नं० ८ "सम्प्रदायवृत्तम्" प्रथमखण्डः श्रीकालीप्रसादशास्त्री जी संस्कृत के सम्पादक सम्वत् १९९६ में लिखा है कि श्रीसम्प्रदायः अस्य सम्प्रदायस्य प्रवर्तको रामानुजाचार्यस्वामी। अयं १०७४ विक्रमाब्दे किम्वा ख्रिस्ताब्दे चङ्गलपट्टनमण्डलान्तर्गते पेनमतूरे "भूतपुर्याम्" अस्य पिता केशवाचार्यो माताच कांतिमती वा भूमिदेवी अष्टवर्षावस्थायां पित्राविहितोपवीतसंस्कारोऽयं।

नं० ९ वैष्णवधर्मरत्नाकर लेखक बावलीग्रामनिवासी श्रीमान् [illegible] कृत संवत् १९८९ शाके १८५४। "श्रीवैष्णवधर्म-

रत्नाकर" रामानन्दीय सम्प्रदायबृत्तान्त, पृष्ठ ८३ से १०० तक प्रश्नोत्तर द्वारा। श्रीराघवानन्दजी प्रश्न किए तुम कौन हो तुम्हारा कौन मत है, तुन्हारा कौन सम्प्रदाय है और तुम्हारा क्या नाम है? रामानन्दजी बोले कि हमारा शैवसम्प्रदाय है मैं सन्यासी हूँ मेरा नाम रामभारती हैं। पूर्वदिशा में गोवर्धनमठ है १ दक्षिण में शृंगेरीमठ है २ पश्चिम में शारदामठ है ३ उत्तर में ज्योतिर्मठ है ४। गोवर्धनमठ के बन १ अरण्य २ शृंगेरीमठ के सरस्वति १ भारती २ पुरी ३ शारदामठ के तीर्थ १ आश्रम २ ज्योतिर्मठ के गिरि १ पर्वत २ सागर ३ यह शंकराचार्य के स्थापित ४ मठ हैं। राघवानन्दजी कहते हैं कि हे रामभारते, तुम्हारा आयुष्य भी पूरा हो चुका है, गुरू से कहो तब रामभारती गुरू से पूछे, गुरू बोले कि इस काल से हम तुमको नहीं बचा सकते हैं जो राघवानन्दजी बचा सकें तो उनकी सेवा करो। तब राघवानन्दजी के चरणों में साष्टाङ्ग कर बोले कि—

त्राहि त्राहि महायोगिन् रक्ष मां शरणागतम्।
त्वां विनान्यो दयासिंधो मम रक्षाकरो नहि ॥२५॥

अर्थ—हे दयासिंधो, आपके बिना इस काल के मुख से मेरा रक्षण करनेवाला दूसरा कोई भी नहीं है, हे महायोगिन् आप मेरी रक्षा कीजिये आपके मैं शरणागत हूँ ॥२५। ऐसा सुन राघवानन्दजी, रामभारती, को विष्णु मंदिर में लेआये उनका देह शुद्धि प्रायश्चित्त और मुंडन कराकर विधि से होम पूर्वक, ताप, और पुंड्र संस्कार कर के पीछे भारतीनाम का त्यागकराय, और रामानन्द दास नाम को धारण कराया।

आपने गुरू श्रीराघवानन्दजी की आज्ञा ले कर काशीपुरी में निवास किया पूर्व अभ्यासानुकूल तपस्वीजटाविभूति धारण करने लगे आजभी उनके अनुयाई तपस्वी जटाविभूतिधारण कर रहे हैं। यहलोह लंगड़ी आदि ३२ भेद रामानन्द स्वामी कृत नही है।

श्रीसम्प्रदाय ग्रन्थ करता ने स्वामी और आचार्य्य शब्द का आस्पद लगाया है वहबन्ध्या पुत्र के सदृश वुद्धिस्थ है, क्योंकि वैरागिजातित्वात् अजागलास्तनवत् इन की बंश परम्परा में किसी ने आचार्य्य शब्द का आस्पद नही लगाया है, उदाहरण द्वारा बता देना परमावश्यक है पुस्तक महापुरूष स्मृति प्रकार में सबनाम में दासान्तर नाम ही है

श्रीरामानुजसम्प्रदाय में आचार्य और स्वामी शब्द योगरूढ़ है पंकजशब्दवत् उदाहरण द्वारा बतलाते हैं देखैं जिस प्रकार पंकज शब्द कमल में ही योगरूढ़ है और शर्म्मा शब्द ब्राह्मण ही में योगरूढ है उसी प्रकार आचार्य्य और स्वामी शब्द आचारियों में ही योगरूढ है यथा—

यस्तु मन्त्रद्वयं सम्यक अध्यापयति वैष्णवः।
सच आचर्य्यस्तु विज्ञेयो भयबन्धविनाशकः ॥१८॥
तप्तमुद्रांकितं कृत्वा मृतं वैष्णवसंमतम्।
तथैवाष्टाक्षरं मंत्रं परं चोपदिदेश सः ॥५४॥
इति स्कन्दपुराणसह्याद्रिखण्ड उत्तररहस्य अध्याय ७।

"आस्पदं प्रतिष्ठायाम्" अध्याय ६ पाद १ सूत्र ४६।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः सनातनः।
सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगृहुः परम् ॥११०॥
इति मनुस्मृति अध्याय १।

"तत्वदर्शी पत्र वर्ष ७ अंक १२ पृष्ठ ६ में लिखा है कि श्री रामानन्द सम्प्रदाय में मैं ही सर्व प्रथम आदमी हूँ जिसने आचार्य्यान्तनाम की प्रथा जारी की है, आचार्य्यान्त नाम की प्रथा के मूल में यह एक प्रधान आशय निविष्ट था कि श्रीरामानुजीय बन्धुओं के हाथों से आचार्य्य नाम की सार्वभौम सत्ता को छीन लिया जाय। मेरे सम्प्रदाय में आने से पहले इस सम्प्रदाय की यह दशा थी कि शिंगड़ा के महान्तजी जैसे विद्वान् भी श्रीतोताद्रि स्वामीजी के समाश्रित थे।

रामायणनायको दाशरथिः श्रीरामो न श्रीसम्प्रदायस्येष्ट देव इति त्वस्माभिर्दशभ्यो वर्षेभ्यः प्रागेव निरधारि। परं मा भूच्छ्री वैष्णवानां शास्त्ररहस्यज्ञानविहीनानां हृदये परिताप इति यावद्रामायणरचना न सम्पन्ना तावन्न केनापि ज्ञातं रामः परमेश्वरावतार इति। श्रीवाल्मीकीयरामायणे वाल्मीकिः रामंविष्णो रर्धभागमुक्तवान्। यत्र विष्णुत्वस्यापि नास्ति पूर्णता कथं तत्रोपास्यदेवताबुद्धिः श्रीसम्प्रदायिनामिति ज्ञानं दुःशकमेव। श्रीसंप्रदाये रामभक्तेषु च प्रवर्ततामिति बुद्ध्या यदस्माभिर्लिखितं तत् "भगवदाचार्योपास्यदेवश्रीगांधिप्रवर्ति तान्त्यजोद्धारविरुद्धताऽऽचरिता इत्यादि विलिख्य हास्यास्पदं नीतम्। परन्तु तैर्विश्वासः कर्त्तव्यः शतेषु हृदयेष्वस्मदीयोक्ति र्बद्धमूलाऽभवदिति।

श्रीवैष्णव महात्माओ सत्य और धर्म पूर्वक सभा में विचारें।

यत्र धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं यत्रानृतेन च।
हन्यते प्रेक्षमाणानां हतास्तत्र सभासदः ॥१४॥

इति मनुस्मृति अध्याय ८।

अर्थ—जिस सभा में अधर्म से धर्म का, और असत्य से सत्य का नाश होता है उसके सम्पूर्ण सभासद नष्ट हो जाते हैं। यह महाराज मनु का आदेश है।

नं० १—श्रीरामानुज सम्प्रदाय में परम्परागत भगवान् व्यास का शिष्य महर्षि जैमिनि और उनका शिष्य महर्षि बोधायन हैं। इस वचन की पुष्टि में सबसे बड़ा प्रमाण भगवान् बोधायन की वृत्तियाँ हैं। इन महर्षि बोधायन का श्रीरामानुज-सम्प्रदाय में उच्चतम आदर है, इस हेतु से श्रीरामानुज सम्प्रदाय में उनकी नाथमुनि नाम से प्रसिद्धि है, अर्थात् हमारे वंश के नाथ हैं। इसको उदाहरण द्वारा बताये देते हैं, श्रीरामानुजस्वामीजी ने शारीरक मीमांसाभाष्य में अथातो ब्रह्मजिज्ञासा सूत्र के अध्याय १ पाद १ के आदि में लिखा है कि "भगवद्-बोधायन कृतां विस्तीर्णां ब्रह्मसूत्रवृत्तिं पूर्वाचार्यास्संक्षिक्षिपुः तन्मतानुसारेण सूत्राक्षराणि व्याख्यास्यन्ते—

नं० २—हिन्दी विश्वकोषकार ने र० रै० प्रकरण १९ में भगवान् बोधायन को रामानुज सम्प्रदाय का पूर्वाचार्य्य माना है।

नं० ३—कल्याण के वेदान्ताङ्क में लिखा है कि रामनुज

सम्प्रदाय के तीन प्रमुख आचार्य्य हैं "व्यास १ जैमिनी २ बोधायन" ३। जिनमें बोधायन महर्षि की वृत्ति बहुत प्रसिद्ध है।

नं० ४—श्रीरामानुजस्वामी कृत "वेदार्थसंग्रह" ग्रन्थ में लिखा है कि, श्रियैनमः श्रीपतयेनमः पूर्वाचार्येभ्योनमः नमोवेदान्त विशदीकरणदीक्षाय परमगुरवे बोधायनमहर्षये।

उक्त विषय पर विचार करते समय हमारा ध्यान पहले जिस विषय पर है, वह कमला प्रेस से प्रकाशित एक छोटी पुतिका "श्रीसम्प्रदाय" नामक २४ पृष्ठ की है इसके रचयिता 'लेखक' देवेन्द्राचार्य महात्मा हैं।

यत्कंठे तुलसी नास्ति ते नरा मूढमानसाः।
अन्नं विष्टा जलं मूत्रं पीयूषं रुधिरं भवेत् ॥

याने जो कंठी नहीं बांधे है वह मूढ है वजोह अन्न खाते है वह विष्टा खाते है जल पीते है वह रुधिर और मूत्र पीते है यह आपके श्लोकके अर्थ है॥ आज सनातनधर्मावलम्बी ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य बड़े बड़े ओहदेवाले जज १ कलटर श्रोत्रिय ३ वैदिक ४ नैयाइक ५ मीमांसक ६ आचार्य्य ७ इत्यादि कोइ भी कंठी नहीं बांधे रहते हैं तो आपके वैरागी जातिके सिद्धान्तसे वह सब मूत्र और रुधिर पीते है, यह आपके मुखसे शोभादेता है क्यो कि आप ने सनातनधर्म वर्णाश्रम त्यागकर वैरागी जाति कबूलकिया है।

२२-वैरागी शब्द—जिस प्रकार शंकर सम्प्रदाय के दश नामी साधु व्यवहारिक भाषा में गोसाईंशब्द से व्यवहृत होते हैं,

इसी प्रकार श्री रामानन्द सम्प्रदाय के सहित वैष्णव चतुः सम्प्रदाय के साधु वैरागी शब्द से अभिहितकिये जाते है, यह आपका सिद्धान्त हैं।

आपके उदाहरण द्वारा उत्तरदेताहूँ श्रीसम्प्रदाय में पञ्चसंस्कार में कंठीबांधने का कोई विधाननही है, देखे पद्मपुराण पाताल खण्ड अध्याय ८२। आपसव कर्म धर्म त्यागकर अपना वंशसहित वैरागी जाति होगये है, मैं आपको दोष क्यों देवे जाति परिवर्तन होने से स्वाभाविक बुद्धी वदलजाती है। श्रीरामानन्द स्वामी जीतो श्रीरामानुज सम्प्रदाय के थे ही, आप के द्वारा वैरागी जाति परिवर्तन हो गई है, अव आप श्रीरामानुज,सम्प्रदायपर आघात कररहे है हा शोक है जैसे गौ के योनीदेशसे यवनादि उत्पन्नहुए है अव वह गौपर आघात कर रहे है उदाहरणद्वारा वतादेते है ध्यानदे

योनिदेशाश्च यवनाः शकृद्देशाच्छकाः स्मृताः
रोमकूपेषु म्लेच्छाश्च हारीताः सकिरातकाः
इति श्री वाल्मीकीय रामायणे वालकाण्डे सर्ग ५५।

अर्थ—योनि से यवन हुआ शकृत देश से सकहुआ और रोम कूप से म्लेच्छहुआ और हरीत हुआ, यहलोग गौके नास करने मेंतत्पर रहते है उसीप्रकर आप महात्माओं ने श्रीरामानुज सम्प्रदाय के नाश करने के वास्ते तत्पर होरहे है श्रीरामानुज सम्प्रदाय आप का कल्याण ही चाहता है क्यो कि इन ही से आप के उत्पत्ति हुआ है लिखा है कि:विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य: स्वयं छेत्तुं

न साम्प्रतम् । इति स्कन्दपुराण आदिरहस्य साद्यादि खण्ड अध्याय २८।

नं०१-पुस्तिकापृष्ठ १५ में लिखा है कि रामानुजीय मिथ्याभिमान और कृतघ्नतावश स्वमूलभूत विरक्त श्रीरामानन्द सम्प्रदाय को आचार्यत्वेन स्वीकारनहीं करते। उत्तर—

महाशयजी आप वैरागी जातीहोगये है इसकारण आपके बुद्धिवदलगई है आप कर्तव्य और अकर्तव्यविमूढ़ होरहे है आप के विरक्त और गृहस्थ का ज्ञान हीनही रहगया है आप खालसा और लोह लंगड़ा आदि विषय ३२ गठरि मस्तकपर लेकेनृत्य कर रहे है, आप के सदृशतो भत्त १ मल्ल २ निछिल ३ नट ४ आदिजाति वांश सिरकी लिये भैसापर लादे गांव २ घुम के नृत्य करते फिरते है वहसव ही अपने को विरक्त वैरागी जाति ही कहते है तो श्रीरामानुज सम्प्रदाय के श्रीवैष्णव किसको २ आचार्यत्वेन स्वीकार करें ध्यानदेवे—

अज्ञो हि विषयासक्तः परं नास्तिकवद्भवेत् ।
ज्ञानवान् विषयासक्त आस्तिको नास्तिको यथा १९९

इहांपरविरक्त का स्वरूप बतादेते है जिस से आपके बोधहो।

अवध राज सुर राजुसिहाई । दसरथ धन सुनि धनद लजाई।
तेहि पुर बसत भरत विनुरागा । चंचरीक जिमि चंपक बागा ॥
रमा विलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बड़भागी

इति—रामचरित मानस अयोध्याकाण्ड दोहा ३२४।

परमात्मनि यो रक्तः स्वामिनो विषये मनः।
दृष्ट्वा श्रुत्वा तत्राहुः प्रसारणं पाशुराद्यः १०० ।

इयं विरक्तिः केषांचित्सौंदर्येणैव जायते।
केषांचित्कृपया तद्वदाचारेण क्वचिद्भवेत् १०७।
इति—श्रीवचन भूषण व्याख्या।

नं० २—पृष्ठ १९ में लिखा हैं कि जिस प्रकार शंकरसंप्रदाय के दशनामी साधु व्यावहारिक भाषा में हैं, गुसाईं शब्द से व्याख्यात होते हैं उसी प्रकार भारत की वीर जातियों में वैरागी प्रमुख वीर + जाति मानी जाती है।

+ वीर जातियों का स्वरूप बताने पर सर्वसाधारण के लंजम रूप होगा।

झल्ला मल्ला नटाश्चैव पुरुषाः शस्त्र वृत्तयः।
द्यूतपानप्रसक्ताश्च जघन्या राजसीगतिः ॥४५॥
इति मनुस्मृति अध्याय १२।

अर्थ—व्रात्य क्षत्रिय से सवर्णा स्त्री में उत्पन्न अध्याय १० प्रसंग में कहे हुए झल्ल, मल्ल, उनमें लाठी धारण करनेवाले, छड़ीवरदार और मल्ल बाहों से युद्ध करनेवाले और रंगभूमी में उतरनेवाले, नट और शस्त्रों से जीविका करने वाले और जुवा खेल तथा मद्य के पीनेवाले पुरुषों की अधम राजसी गति जाननी चाहिये जिनका निरूपण पुनः किया जाता है।

तत्र मल्ला नटा झल्ला सूता वैतालिकास्तथा।
उपतस्थुर्महात्मानं धर्मपुत्रं युधिष्ठिरम् ॥७॥
इति महाभारत सभापर्व अध्याय ४।

किन्तु रामानुजीय अपने को बैरागी न कहाये आचारी शब्द से प्रसिद्ध हैं।

नं०३—पृष्ठ १९ में काठिया आदि भेद चतुः सम्प्रदाय में काठिया १ मूजिया २ लोहलंगड़ी ३ खाकी ४ तपस्वी जटाधारी पंचकेशी ७ रसिक ८ नागा ९ अतीत १०। आदि अनेक भेद हैं, यह सब रामानुजमत में एक भी नहीं है।

नं४—पृष्ठ २२ में लिखा है कि वस्तुतः रामानुजमत की वास्तविकस्थिति इसप्रकार है जैसे उत्तर भारत में पलटु दादू, जगजीवन, राधास्वामीइत्यादि। उपर्युक्त पुस्तक पृष्ठ १३ में चारों

महाभारत सभा पर्वमहाराज युधिष्ठिर की सभा में मल्ल-लोग, सूतलोग, वैतालिक, लोग उन की सेवामें अपना २ गुण दिखाया करतेथे ७।

इस मनु और महाभारत के प्रमाणों से बिदित है कि यह लोग जब, क्षत्रिय लोग राजारहेतबये लोग खेल तमासादि दिखा के अपनी जीविका वृत्ती करते रहे अब वह बाते है नहीं, तों सब मिल कर एक वैरागी जाति होगये, और नट लोग बड़ी चतुरता कलाबाजी दिखाकर के सब लोगों को मोहलेते हैं यह लोग प्रसिद्ध है। अब यह लोग चाहते हैं की श्रीरामनुज सम्प्रदाय के श्रीवैष्णवों से लड़ झगड़ के तथा धमका के श्रीवैष्णव बनजावें बलातकार उन के साथ भोजन करें करावैं ग्रन्थकर्त्ता का यह गूढ़ अभि प्रायहै,

एकां लज्जां परित्यज्य सर्व्वत्र विजयी भवेत्।

सम्प्रदाय में ५२ बावन द्वारा है इस में ३६ द्वारा श्रीरमानन्दीय के इस में एकद्वारा श्रीरामकबीर का है।

मुन्सीनवलकिशोर यन्त्रालय में छपी भक्तमाल फरवरी सन् १८८४ इस्वी में, पृष्ट २५९ में लिखा है की श्रीरामानन्द स्वामी के शिष्य, कबीरजी होगये तिलक माला धारण किया मुसलमानों ने उनको बहुत कष्टदिया कि तूम काफिर, हिन्दू हो तब वह बैरागी जाति होगये शिद्धपरमाचार्य होगये उनके द्वारे के शिष्य प्रशिष्य आजभी बहुत संख्या में हैं बहुत स्थान धारी है उसी पुस्तक पृष्ट २३० में लिखा है की बैरागियों की छोटी जाति है।

श्रीनाभाजी कृतभक्तमाल नवल किशोर प्रेस में सन् १९४० ई० में छपा पुस्तक पृष्ट १४३ में लिखा है कि कबीरजी अपने को मलेच्छ जातिवताये हैं, वर्णाश्रमनही रखे हैं, पृष्ठ १३८ में लिखा है कि रैदास जू चमार थे श्रारामानन्दजी के शिष्य होगये, पृष्ठ ३०२ में लिखा है कि श्रीकूबाजी कुम्हार× जातिके थे। यहसब कूबाजी की परम्परा कलयुगी है।

× श्रुतिस्मृति विरोधपरिहार—

"श्रुतिस्मृति पुराणानां विरोधो यत्रदृश्यते
तत्र श्रौत्रं प्रमाणं तु तयो द्वैधे स्मृतिर्वरा ४
वैश्यासु विप्रक्षत्रभ्यां ततः शूद्रासु शूद्रवत्
अधमादुत्तमायां तु जातः शूद्राधमःस्मृतः ८

नाभाजी की पूर्वकथा पृष्ट १५ में लिखी है कि "हनूमान वंश में जन्मप्रसिद्ध जाके" ५ पांचवर्ष की उमर में आंख रहित होगये थे, श्रीअग्रस्वामीजी ने उनको शिष्य करलिया आशीर्वाद से नेत्र होगये। भक्तमाल रचना करके वैरागीजाति में आचार्य

ब्राह्मण्यां शूद्रजनितश्चंडालोधर्मवर्जितः।
कुमारीसंभवस्त्वेकः सगोत्रायां द्वितीयकः ९।
ब्राह्मण्यां शूद्रजनितश्चंडालस्त्रिविधः स्मृतः।
वर्द्धकिर्नापिता गोप आशायः कुंभकारकः १०।
वणिक्किरातकायस्थ मालाकारकुटुंबिनाः।
वरटा मद चंडालदासश्वपचकोलकाः ११।
एतेंऽत्यजाः समाख्याता ये चान्ये च गवाशनाः।
एषां संभाषणात्स्नानंदर्शनादर्कवीक्षणम् १२।

इति—व्यासस्मृति अध्याय १।

युगे युगे अल्पकान् धर्मान् निरीक्ष्यमधुसूदनः।
वेदव्यासस्वरूपेण वेदभागं करोति वै १७।
वेदव्यासमुनिः साक्षात नारायण इति द्विजाः
निस्ताराय तु लोकानां स्वयंनारायणःप्रभुः १८।
व्यासरूपेण कृतवान् पुराणानि महीतले १९।

इति नारदीयपुराण पूर्वभागअध्याय १ शब्दकल्पद्रुम।

चाटतस्करदुर्वृत्तमहासाहसिकादिभिः।
पीड्यमानां प्रजां रक्षेत्कायस्थैश्च विशेषतः ३३६।

इतियाज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १।

संज्ञा होगई, पृष्ट १६ में "चरणाम्रत पानि संतशीतसो अनन्त प्रीति जानिरसरीति तातेहृदय रंगछायो है"। भावार्थ, श्रीनाभाजी महाराज महात्माओं के चरण धोकर नित्य प्रति पीते थे, इससे सिद्ध होगये और "शीतप्रसाद ☞ जूठा" संतो का खाते थे इससे बड़ा प्रभाव बढ़ गाया "आजभी नूतन परम्परावाले महात्माओं में वह चाल प्रसिद्ध है।

☞ उच्छिष्टमपि चामेध्यं भाजनं तामसप्रियम्।
उर्ध्वं गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसा १८।
यःशास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
नससिद्धमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् २३।

इति श्रीमद्भागवद्गीता अध्याय १

वैश्योऽजीवन् स्वधर्मेण शूद्रबृत्यापि वर्तयेत्।
आचरन्न कार्याणि निवर्त्तेत च शक्तिमान् ९८।

इति—मनुस्मृति अध्याय १०।

अर्थ—वैश्य आदि अपने बृत्ति से असमर्थ हो तो ब्राह्मण क्षत्रिय, और अपनी जाति की सेवाबृत्तो कर के निर्वाह करै किन्तु उनके उच्छिष्ट जूठा कौन खाय और आपत्ति के दूरहो जाने पर शूद्र बृत्ति से निबृत्त हो जाये ९८।

प्रश्न-जिस समाज में परम्परा गत उच्छिष्ट "जूठा" भोजन की चाल चल रही है उनके वास्ते अधर्म क्या है। जूठा खाना सब सम्प्रदाय में वर्जित है। नूतनपरम्परावाले महात्माओं में, आचार्याभिलषित है। चतुः सम्प्रदाय के वैष्णवि इस पर विचार करें।

भारतनिर्माता लेखक कृष्णवल्लभद्विवेदी, संपादक हिन्दी विश्व भारत पृष्ठ ७२ पंक्ति पांच में लिखा है कि रामानुज की यह उदार भावना आगे चल कर उनकी शिष्य परंपरा के सुप्रसिद्ध स्वामी रामानन्द के नेतृत्त्व में उत्तरी भारत में विशेष रूप से पुष्पित और पल्लवित हुई रामानुज का जन्म १००१ ईस्वो में और मृत्यु ११३७ ईस्वी में हुई।

नं०१—पृष्ठ ७९ में लिखा है कि, रामानन्दने श्रीसंम्प्रदाय से पृथक् होकर अपना एक स्वतंत्र संप्रदाय स्थापित किया जिसका नाम "रामाव्रत" संम्प्रदाय पड़गया।

नं०२—पृष्ठ ८० में लिखा है कि रामानन्द के बारह प्रधान शिष्य थे "रैदास" या रविदास चमार १ कबीर। जूलाहा, २। धन्नांजाट ३। सेनानाई ४। पीपाराजपूत ५ भवानन्द ६। सुखानन्द ७। आशानन्द ८। सुरासुरानन्द ९। परमानन्द १०। महानन्द ११। और श्रीआनन्द १२। [दादू पंथी, निराकारी, रामस्नेही, हिजरी पंथ]

नं०३—रामानन्द और कबीरके ही पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए क्रमशः दादूदयाल १ सुन्दरदास २ रज्जव ३ धरणीदास चरणदास ४ भीखा ५ दरियासाहब ६ मलूकदास ७ पलटूदास ८ देधराज ९ अदि कई उच्चकोटि के संत उत्तर भारत में हुए, जिनमें दादू १५४४—१६०३ ई० में सब से बड़े चेला थे। श्रीरामानन्दस्वामी के १२ शिष्य थे उनमें ब्राह्मण और क्षत्रिय का नाम भी नहीं आता है।

राजपूत तो आते हैं, यह क्षत्रिय से भिन्न हैं, यथा—

क्षत्रात् करणकन्यायां राजपुत्रो बभूव ह ११०

इति ब्रह्मवैवर्तपुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय १०।

अर्थ—क्षत्रिय से करण की कन्या में राजपुत्र जाति उत्पन्न हुई हैं ११०। करण किस वर्ण में है इसको बतादेना परमावश्यक है। शूद्राविस्तु करणे १८ इति ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्मखण्ड अध्याय १०। शूद्रायां करणे ३ इति गरुड़पुराणपूर्वखण्ड अध्याय ९६। अमर कोष काण्ड २ शूद्रवर्गश्लोक २ में देखा श्रीरामानन्दस्वामीजी के प्रधान शिष्य श्रीकवीर थे रामराम जप करते २ सिद्ध होगये, राममय होनेसे रामकवीर ऐसी आख्या हुई उनका द्वारा आदि चलने लगा, उदाहरण सूरदासजी श्याम २ जपते २ श्याम सूर ऐसी आख्याहुई भजनका ऐसा प्रभाव है, आपने "प्रपन्नामृत"* पुस्तक-के आधारपर श्रीरामानुज स्वामीजी का और उनके पूर्वाचार्य्यं का अपमानकिया है, वह ग्रन्थ "श्रीसम्प्रदाय" में मान्य नहीं है, तथापि आपके सिद्धान्त से तो वह सब आचार्य्य हिन्दु जाति में हैं हीं गोरक्षक थे ही, आप अपने आचार्य्यों को कौन सन्दूक में बन्दकरके किस समुद्रमें डुबाकर, स्वतन्त्र श्रीसम्प्रदायाचार्य्यं बनेगें ध्यान देवैं।

---

* मैंने एकपुस्तक श्रीअवधवंशीय क्षत्रियमार्तण्ड में एक संग्रह पुस्तक से श्लोक लिखा है उसमें "प्रपन्नामृत" नाम लिखा रहा, वही मैंने भी लिख दिया है उसका मैं पाबन्द नहीं हू।

श्रीरामानन्दीय भक्तशिरोमणी श्रीनाभाजी के आदेस पर ध्यान देवे ।

श्रीरामानुज उदार सुधानिधि अवनि कल्पतरु ।
विष्णुस्वामी वोहित सिंधु संसार पार कर ॥
मध्वाचार्य मेघ भक्ति सर ऊसर भरिया ।
निंबादित्य आदित्य कुहर अज्ञान जु हरिया ॥
जनम करम भगवत धरम संप्रदाय थापी अघट ॥
*चौबीस प्रथम हरि वपु धरे त्यों चतुर्व्यूह कलियुग प्रगट ॥२८॥
देवाचारज द्वितीय महा महिमा हरियानन्द ।
तस्य राघवानन्द भये भक्तन को मानद ॥
पत्रावलंव पृथिवी करि स्थाई ।
चारि वरण आश्रम सबही को भक्ति दृढ़ाई ॥

---

* भागवत, स्कन्ध १ अध्याय ३ में २४ अवतार श्रीमन्नारायण से ही लिखा है यथा—पूर्णावतार १ अंशावतार २ आवेशावतार भेद से—

ब्रह्माजी १, पुरुषावतार २, सनतकुमार ३, वाराह ४, नारद ५, नर नारायण ६, कपिल ७, दत्तात्रेय ८, यज्ञ ९ ऋषभदेव परमहंस १०, पृथु ११, मत्स्य १२, कच्छप १३, मोहिनो १४, धन्वन्तरि १५, नरसिंह १६, वामन १७, परशुराम १८, व्यास १९, श्रीरामचन्द्र २०, बलदेव २१, श्रीकृष्ण २२, बुद्ध २३, और कल्की २४। इसीप्रकार चारव्यूह कलियुग प्रगटहुआ २८। इन चारो के अंतर गत नहीं है वह आधुनिक पंथाइ है यह निश्चय होगया ।

तिनके रामनन्द प्रगट, विश्वमंगल जिहिं वपु धरयो ।
× श्रीरामानुज पद्धति प्रताप अवनि अमृत व्है अनुसरायो ।३५।
अनंतानंद कबीर सुखा सुरसुरा पद्मावत नरहरि ।
पीपा भावानंद रैदास धना सेन सुरसुरकी घर हरि ।
औरौ शिष्य प्रशिष्य एकते एक उजागर इत्यादि ३६।
वर्णाश्रम अभिमान तजि, पदरज वंदहिं जासुकी ।
संदेह ग्रंथ खंडन निपुण, बाणी विमल रैदासकी ।।५९।।
हिंदु तुरक प्रमाण रमैनो सबदी साखी ।
पक्षपात नहिं वचन सबन के हित की भाखी ।।
कबीर कानि राखी नहीं वर्णाश्रम षटदर्शनो ६० ।

नाभाजी अपना पूर्वाचार्य्य रैदास और कबीर की विमल बाणीका उपदेश लिया । पदरज की वंदना किया ।

यथा। वृद्धस्य च पूजायाम् पाणिनीय सूत्र ६२ अ० २ पाद २ ।

श्रीरामतापनीयोपनिषद् । श्रीमद्हरिदास कृत भाष्योपेता श्रीसंवत् १९८४ वैक्रमीय में छपा पृष्ठ ५२ में लिखा है कि "नारायणशब्दस्य मत्स्यादि जलजन्तुषि, तरतिव्याप्तिः अतो न परस्वरूप बोध्यकः"

"रामनवरत्न" पृष्ठ १८ में लिखा है कि मत्तो नारायणो विष्णुरात्मानं कतिधा सृजत् । तेषु तातविशिष्टाय अवताराहरेर्दश२८

×जे सठ गुरु सन इरिषा करहीं। रौरव नरक कोटि जुग परहीं ।।
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा। अयुत जन्मभरि पावहिं पीरा।।
इति रामचरित मानस उत्तर काण्ड दोहा १०७ [क]

मच्छक्त्या प्रतिरुद्धानां मत्स्यादिनां हि पार्थिव, जन्मकार्यान्तर प्राप्ति स्वरूपं जायते ३६ ।

अर्थ—जानकी जी ने जनक जी से कहा कि हमसे नारायण, विष्णु अपने अनेक अवतार करते हैं उन अवतारों में राम कृष्ण आदि दश अवतार श्रेष्ठ हैं। हमारी शक्ति से मत्स्य कर्मादि अवतारों का जन्म स्वरूप और रावण कंस वधादि रूप कार्यान्तर की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार, श्रीमहारामायण में लिखा है। और श्रीरामसारसंग्रह में भी लिखा है। यह वाममार्गियों के सिद्धान्त है।

आज काल इन्ही नूतन परम्परा वाले मे से एक हिजड़ी पंथ निकाला है "वहकहता है कि मैं श्रीरामानन्दीय वैष्णव हूं जो कि लड़कों को रामजी बना के उनके साथ दुराचार करता और कराता है और परब्रह्म परमात्मा श्रीरामजी पर दुराचार का दोष आरोपन करता है, । इसको उदाहरण द्वारा बता देना परमावश्यक है जिससे जनता संभलजावें

"श्री[illegible]" रचयिता—रामायणी श्रीरामावातारदासजी। प्रकाशिका श्रीमतीमुन्नी कुमारीजी महोदया ग्राम रोठैरा, पो० मुइली, जि० मिर्जापुर १९८१ वि० पृष्ट ५५ नं० १३, १४—१५ तरंग ७७, ७८, ७९। मे लिखा है यथा।

हमारे पिया ठाढ़े सरयू तीर।

देखि सखी यह रूप मनोहर, उठीकरेजे पीर १

छोड़ि लाज मैं जाय मिली जहँ खड़े लखन केवीर।

मृदु मुसुकाय पकरि कर मेरा, खैंचि लियो तल चीर २।

झाऊ वृक्ष की झाड़ी भीतर, करन लगे रति धीर ।
राम सखो वह कंज मनोहर, जहँ बोलत रहे कीर ३।
कर सों कमर, माथ सो माथो, होंठौं से होठ मिलाय रहीरे ४।

श्रीरामचन्द्रजी साक्षात्नारायण है यथा।

भविता हि तदा रामो नरो नारायणः प्रभूः २१।
तस्य पत्नी महाभागा लक्ष्मीः सीतेति विश्रुता
दुहिता जनकस्यैषा उत्थिता वसुधातलात् २३।
न सीतायाः परं भार्यां वव्रे स रघुनंदनः।
यज्ञे यज्ञे च पत्न्यर्थं जानकी कांचनी भवत् ७।
इति श्रीवल्मीकीयरामायण उत्तरकाण्डसर्ग ३० ३प्रक्षिप्तसर्ग१००

तदुपरान्त श्रीमान्नारायण भगवन् ही साक्षात मनुष्यका रूप "श्रीराम" धारणकर अवतार लेगें ।२१। और उनकी पत्नी महा भाग्यवती साक्षात् लक्ष्मी ही साथ में सीता रूपसे अवतरित होंगी यह हमने सुना है। यह श्रीसीतामहारानीजी सर्वेश्वरी ही पृथ्वी से प्रकट होकर जनकनृपति की कन्या कहलावेंगी ।२३। पश्चात् भगवान् रामचन्द्रजी सीताजी को ही अपनी सर्वतो भावेन पत्नी रूपसे ग्रहण करेंगे। यहां तक कि सीताजी के कारण वश अनुपस्थिति में भी आवश्यक कार्य यज्ञा दिकों में भी जहां कि पत्नी का साथ आवश्यक है पत्नी की जगह सुवर्ण निर्मित जानकी से ही यज्ञादिको साधन करेगें ।७।

न रामः कर्कशस्तात नाविद्वान्नाजितेंद्रियः
अनृतं न श्रुतं चैव नैव त्वं वक्तुमर्हसि॥१२॥

रामो विग्रहवान्धर्मः साधुः सत्यपराक्रमः।
राजा सर्वस्य लोकस्य देवानामिव वासवः॥१३॥
इति श्रीवाल्मीकीय रामायणे अरण्य काण्डे सर्ग ३७

अर्थ–मारीच ने कहा हे भाई रावण जी तुमने श्रीरामचन्द्र जी के दोष बताये हैं सो सब तुम्हारी बड़ी भूल है क्यों कि श्रीरामचन्द्रजी कठोर स्वभाववाले नही हैं एवं बड़े विद्वान् तथा सर्वदा सर्वथा जितेन्द्रिय हैं इसलिये हे रावण आप को बिना सुने देखे इस प्रकार झूठ नहीं बोलना चाहिये। श्रीरामचन्द्र महाराज साक्षात् धर्मकी मूर्ति हैं सम्पूर्ण संसार के राजाधिराज हैं जिस प्रकार स्वर्ग लोक में देवताओं के भी ऊपर इन्द्र शा सन करते हैं उसी प्रकार ये भी मनुष्य स्थावर जंगम देव गन्धर्व अदि सभी के ऊपर शासन करनेवाले हैं ॥१२॥१३॥

श्रीरामानुज सम्प्रदाय में कोई भी आचार्य्य राम कृष्ण कीनिन्दा किसी प्रकार नहीं की क्योंकि वह सब अवतार पूजनीय हैं उदाहरण द्वारा बताते हैं कि, अयोध्याजी में गोलाघाट पर श्रीअम्बाजी के स्थान 'दिव्यदेस' में श्रीरामलक्ष्मण जानकी हनुमान के सहित पूजेजाते हैं विभीषणकुण्ड श्रीवलरामाचार्यस्वामीजी के स्थानमें श्रीविजयराघव श्रीराम लक्ष्मण जानकी हनुमानजी पूजे जाते हैं दन्तधावनकुण्ड "उत्तर अहोवलमठ" श्रीमहाराज जयकृष्णा चार्यजी के स्थान में श्रीरामलक्ष्मण जानकी हनुमान पूजे जाते हैं, श्रीहनुमानकुण्ड वड़ाखटला में श्रीगोपालाचार्यस्वामीजी के स्थान में श्रीरामलक्ष्मण जानकी भक्तराज हनुमानजी पूजे जाते हैं

इत्यादि और भी बहुतस्थान हैं। नूतन परम्परावाले रामजी के निन्दा कर ते हैं कईएक स्थलों में वताया है। और हनुमानजी को चतुर्मुख ब्रह्मा के गुरु कह अपमान करते हैं हनुमानजी से और रामजी से प्रथम किष्किन्धामें मुलाकात हुई थी रामजी के दास होने से पूजे जाते हैं यह सब शास्त्र के सम्मत है।

य:सहाञ्चति सध्यङ स स तिर्यङ यस्तिरोऽञ्चति २०९३।

इति अमरकोष विशेष्यविघ्नवर्ग कांड ३। पुस्तक पृष्ट ८ से पृष्ट १३। तक देखे। अवशिष्ट प्रकरण देखें।

×"आत्मा वा इदमेकएवाग्रआसीत् नान्यत्किंचन मिषत् सईक्षत लोकान्नु सृजा इति स इमान् लोकानसृजत"२ "एको ह वैनारायण आसीन्न ब्रह्मानेशानो नेमे द्यावापृथिवी न नक्षत्राणि नापो नाग्निर्न सोमो न सूर्यः स एकाकी नर मेत तस्य ध्यानान्तस्थस्यैका कन्यादशेन्द्रियाणि" इत्यादिषु। "यः पृथिव्यां तिष्ठन् पृथिव्या अन्तरः" इत्यारभ्य ४ "य आत्मनि तिष्ठन्" आत्यादिषु च।

इति श्रीशारीरकमीमांसाभाष्ये जगद्व्यापार वर्जाधिकारणम् अध्याय ४ पाद ४ सूत्र २०।

यहां पर विचार यह है कि सब अवतार नारायण से ही होते हैं। और जगत की उत्पत्ति नारायण से ही होती है।

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तर जायमानो बहुधाभिजायेत्। तस्य योनिम् परि पश्यन्तिधीरास्तस्मिन्हतस्थुर्भुवनानि विश्वा॥

× ऐत १—१॥—२, महो, १३—१॥—३, बृ, ५—७—३॥—४, शतपथ, १४—५—३०॥

इति यजुर्वेद अध्याय ३१ मन्त्र १९ और ऋग्वेद मण्डल ६ अध्याय ४ सूक्त ४७ मन्त्र १८।

अर्थ-प्रजापति ब्रह्मा जिस नारायण के गर्भ में सृष्टि रचते हैं। प्राणी मात्र के अन्तर रहते हुए अन्तर्यामी रूप से अनेक प्रकार के अवतार लेते हैं।

प्राणीमात्र के अन्तर रहते हुए अन्तर्यामी रूप से अनेक प्रकार के अवतार लेते हैं। उनके दिव्य शरीर को धीर भक्त ही देखते हैं उस ईश्वर में समस्त भुवन स्थित है।

"आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नर शूनवः।
ता यदस्या यनं पूर्वं तेन नारायण स्मृतः १०।
यत्तत् कारणमव्यक्तं नित्यं सदसदात्मकं।
तद्विशिष्टः सपुरुषो लोके ब्रह्मेति कोर्त्त्यते ११।

इति—मनुस्मृति अध्याय १।

अर्थ—जल नर से उत्पन्न है इससे जल का नाम नार है वही नार इस परमात्मा का प्रथम आश्रय अर्थात् निवास स्थान है तिससे इस परमात्मा का नाम नारायण हुआ १०। यों वह लोक वेद आदि सब में प्रसिद्ध है परमात्मा से सब उत्पन्न होनेवालों का कारण और अव्यक्त अर्थात् वाहरी इन्द्रियों करके नहीं ग्रहण करने योग्य और उत्पत्ति विनाश रहित और सत्असत का आत्म भूत है उस करके उत्पन्न किया हुआ पुरुष ब्रह्म इस नाम से कहाता है ११।

अवताराह्यसंख्याया: हरेः सत्यनिधेर्द्विजाः ।
यथाऽविदासिनः कुल्या सरसः स्युसहस्रशः २६।
नरदेवत्त्वमापन्नः सुरकार्यचिकीर्षया ।
समुद्रनिग्रहादीनि चक्रे वीर्याण्यतः परम् २७।

इति श्रीमद्भागवत् स्कन्ध १ अध्याय ३ ।

अर्थ–हेसत्यनिधे जिस प्रकार महाह्रद से सहस्रों नदियाँ निकलती हैं, वहह्रद समुद्रवत परिपूर्ण बना रहता है उसी प्रकार नारायण से असंख्य अवतार होता है। नारायण पूर्णरूप से बने रहते हैं २६। श्रीराम श्रीकृष्ण पूर्णावतार हैं, यथा-

एवं चतुर्विधा देवि मम पुर्यो भवन्ति हि ।
माथुरे मथुरा पुण्या तत्र बृन्दावनं वनम १
अयोध्या कोशले देशे सरयू पुलिनेस्थित ।
तत्र राजीवपत्राक्षो रामो दशरथात्मजः २ ।
परमात्मा संभवं च जानकी रूपया त्वया ।
तद्योर्लीलानुसंधानान्मुनिर्भंजन्ति सद्गतिः ३

इति—नारद पंचरात्रगत बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ७।

ततो नारायणो देवो नियुक्तः सुरसत्तमैः।
जानन्नपि सुरानेवं श्लक्ष्णं वचनमब्रवीत् १।
पुत्रत्वं तु गते विष्णौ राज्ञस्तस्य महात्मनः।
उवाच देवताः सर्वाः स्वयंभूर्भगवानिदम् १।
ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नवमीके तिथौ।
प्रायमानो जगन्नाथं सर्वलोक नमस्कृतम् १०।

कौसल्याऽजनयद्रामं दिव्यलक्षण संयुतम् ।
विष्णोरर्धं महाभागं पुत्रमिक्ष्वाकुनन्दनम् १०
साक्षाद्विष्णोश्चतुर्भाग सर्वैः समुदितोगुणैः ।
भरतो नाम कैकैय्याज्जज्ञे सत्य पराक्रमः १३ ।
अथ लक्ष्मण सत्रुघ्नौ सुमित्राजनत्सुतौ १४ ।
इति—वाल्मीकीय रामायणे वालकाण्डे सर्ग १६ से १८ तक

कदाचिदवतीर्योयं मंदं भक्तानुकम्पया ।
क्षीराब्धौ देव देवेसौ लक्ष्मीनरायणोभुवि ८ ।
स शेषः शंख चक्राभ्यां देवैर्ब्रह्मादिभिः सह ।
त्रेता युगे दाशरथोभूत्वा नारायणो बभौ ९।
शेषोऽभूत् लक्ष्मणो लक्ष्मीः जानकी शंखचक्रके ।
जातौ भरत शत्रुघ्नो देवाः सर्वेपि वानराः १०।
वभूवुरेवं सर्वेपि देवर्षिभय शांतये ।
तत्रनारायणोदेवः श्रीराम इति विश्रुतः ११ ।
इति—अगस्त संहिता परम रहस्य अध्याय ३ ।

ध्यात्वा वीरं परंब्रह्म राघवम् नियतव्रतः ।
चतुर्भुजं शंख चक्रं गदापद्म धरंविभुम् ॥
इति— अगस्त संहिता परमरहस्य अध्याय १५।२५।

पितामह वचः श्रुत्वा विनिश्चित्य महामतिः ।
विवेश वैष्णवंतेजः स शरीरः सहानुजः १२।
इति—वाल्मीकीयरामायण उत्तरकाण्ड सर्ग १११।

चतुर्भुजमुदाराङ्गं श्यामं पद्म निभेक्षणम्
श्रीभूमि नीला सहितं चिन्तयेच्च सदा हृदि ।

इति भरद्वाज संहितायाम् न्यासोपदेश अध्याय ३।

श्री के पर्य्यायवाची नाम यथा—

"राघवत्वेऽभवत्सीता रूक्मिणी कृष्णजन्मनि।
अन्यषु अवतारेषु लक्ष्मी एवऽनपायिनि ॥

इति बिष्णु पुराणात् शिशुपाल वद्ध सर्ग १ श्रि ४: कमल बासिन्या रमणोऽयंमहाविभुः। तस्माच्छ्री रामइत्यस्यनाम सिद्धं पुरातनम्

इति—पद्मपुराण लक्ष्मीपद्मालया पद्मा कमला श्रीःहरि-प्रिया इन्दिरा लोक माता मा क्षीरोद तनया रमा २८

इति—अमरकेश काण्ड १ स्वर्ग वर्ग ।

"श्रीसम्प्रदाय" पुस्तक पृष्ठ १२ पं० पांच में लिखा है कि "श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्यौ" इस वाक्य में श्री का स्पष्ट उल्लेख हुआ है "श्री" सीता हैं। यह कल्पना सर्वथा निर्मूल है क्योंकि सीता रूप अनित्य है, यह रूप कार्यवश रहता है, नर नाट्य है, पुनः लक्ष्मी रूप में लीन हो जाता है। सीताका पर्य्यायवाची शब्द यथा

अथ मे कृषतः क्षेत्रंलांगलादुत्थिता ततः ।
क्षेत्रं शोधयाता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुत्य १३।

इति—वाल्मीकीय रामायण वालकांड सर्ग ६६ ।

गोदारणं च सीऽथ शम्याश्लीयुग कीलकः
ईषा लाङ्गलदण्डःस्यात्सीतालाङ्गल पद्धति १४।

सीता का पर्य्याय शब्द अमरकोष काण्ड २ वैश्यवर्गसे

संपत्तिः श्रीश्च, लक्ष्मीश्च, अमरकोश क्षत्रियवर्ग कांड २।

श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहो रात्रे।

इति शुक्लयजुर्वेद अध्याय ३१ मंत्र २२।

ऋषिरादित्यं श्रुत्वा प्रार्थयते। आदित्यं स्तुत्वा प्रार्थयते। "आदित्य अंतरयामि नारायण के ऋषि प्रार्थना करते हैं" यथा महीधरभाष्य। हे आदित्य। श्रीः लक्ष्मीश्चते तव पत्न्यौ। जाया-स्थानीये त्वद्देश्य इत्यर्थः। यया सर्वजनाश्रणीयो भवति सा श्रीः श्रीयते ऽनया श्रीः सम्पादित्यर्थः। यया लक्ष्यते दृश्यते जनैः सा लक्ष्मीः सौन्दर्यमित्यर्थः। "एवं पुरुष-शब्दस्य नारायणपरत्वं निश्चीयते।"

नारायण परंब्रह्म नारायण परंतपः।

नारायण परं चेदं सर्वं नारायणात्मकम् ॥१०७॥

इति महाभारत शांतिपर्व भीष्म युधिष्ठिर संवाद।

मुनिवेषा यथा प्राप्ता वयमेते नृपस्तथा।

तवांशो नृपतिश्चायं रामचन्द्रः प्रतापवान् ॥४३॥

इति पद्मपुराण पतालखंड अध्याय १०५।

इसीसे जिनकी नारायणसे परम्परा नहीं है वह आधुनिक पंथाइ कहे जाते हैं, यह इसका तत्त्व है।

नं० १—बृहद्ब्रह्मसंहिता में लिखा है कि नारायणने ब्रह्मा को राममन्त्र का उपदेश किया है इसीसे ब्रह्मसम्प्रदाय कहा जाता है।

नं० २—नारायण श्री: जी को नारायणमन्त्र और द्वय-मन्त्रादि दिया इसीसे यह श्रीसम्प्रदाय कही जाती है, इसीका नामान्तर "रामानुजसम्प्रदाय" कहा जाता है।

नं० ३—नारायणने हंसरूप से सनकादिक को मन्त्र दिया इसीसे सनक सम्प्रदाय कही जाती है।

नं० ४—नारायणने रुद्र को मन्त्र दिया इसीसे यह रुद्र-सम्प्रदाय कही जाती है। यह चारों सम्प्रदाय की परम्परा नारायण से ही चली है।

नं० ५—श्रीशंकराचार्यजी की परम्परा, नारायण से ही चली है।

अष्टोत्तरशतोपनिषद् की भूमिका में शंकराचार्यजी की परम्परा लिखी है।

नूतनपरम्परावाले लोग "प्रपन्नामृत" पुस्तक देख प्रायः पागल से हो गये हैं, इससे उन्हें क्षोभ हो गया है, महाशयजी जिस "प्रपन्नामृत" पुस्तक के बल पर आपने श्रीरामानुजस्वामीको और उनके पूर्वाचार्य्यों का अपमान किया है, उसका प्रायश्चित कर लेवें क्योंकि वह "प्रपन्नामृत" कौन ने बनाया वह कहां का था किस जाति का था कुछ भी पता नहीं, ऐसा कौन मनुष्य है जो ग्रन्थ लिखे और अपने पिता का नाम न लिखे, पुस्तक पृष्ठ२० देखें टिप्पणी देखें, हां बिना पिता के पुत्र किसके अपना पिता कहे या क्या लिखें, हमें संतोष है कि आपने "वैरागीजाति" अपने को कबूल कर लिया है संभव है कि प्रपन्नामृत किसी वैरागी का लिखा है।

श्रीकाञ्चीप्रतिवादि भयङ्कर सिंहासनाधीश्वराः श्रीमदन्ताचार्य स्वामीजी तत्त्वबोधनामक पुस्तकमें लिखते हैं कि 'प्रपन्नामृत' तो निरा आधुनिक पुस्तक है अतः उसकी पाबन्दी आचार्यों के सिद्धान्त एवं व्यवहार पर कैसे होगी ? स्मृति पुराण संहिता के जो अनुकूल होगा वही माना जायगा, इसके विरुद्ध त्याज्य है। श्रीवैष्णव सम्प्रदाय में "प्रपन्नामृत" ग्रन्थ की कुछ भी मान्यता नहीं है । दिव्य सूरिचरित 'भार्गवोपपुराण' गुरुपरम्पराप्रभाव यतीन्द्र प्रवणप्रभाव श्रीरामानुज दिव्य चरित इत्यादि प्राचीन ग्रन्थ ही माने जाते हैं। द्राविड़देश में प्रपन्नामृत नाम को ही बहुत कम मनुष्य जानते हैं।

श्रीरामानुजसम्प्रदाय में श्रीरामानन्दस्वामी हैं इसका क्या प्रमाण है। यहां पर शास्त्र और लोक व्यवहार द्वारा बताते हैं यथा—

अब भागवत, स्कन्द ९, अध्याय १ से १३ अध्याय के अनुसार, सूर्यवंश का क्रमशः श्रीरामचन्द्रपर्यन्त परम्परा वर्णन करते हैं यथा—

राजोवाच ।

ये भूता ये भविष्याश्च भवन्त्यद्यतनाश्च ये ।
तेषां नः पुण्य कीर्तीनां सर्वेषां वद विक्रमान् ॥५॥

अर्थ—इस वंश में जो पुरुष हो गये हैं जो होंगे और जो वर्तमान हैं उन सबकी कीर्ति पुण्य-प्रद है। अतः उनके पराक्रम युक्त कर्मों को कहिए ५।

श्रीशुक उवाच ।

श्रूयतां मानवो वंशः प्राचुर्येण परंतप ।
न शक्यते विस्तरतो वक्तुं बर्ष शतैरपि ॥७॥
परावरेषां भूतानामात्मा यः पुरुषः परः ।
स एवासीदिदं विश्वं कल्पान्तेऽन्यन्न कश्चन ॥८॥
तस्यनाभेः समभवत्पद्मकोशो हिरण्मयः ।
तस्मिञ्जज्ञे महाराज स्वयंभूश्चतुराननः ॥९॥
मरीचिर्मनसस्तस्य जज्ञे तस्यापि कश्यपः ।
दाक्षायण्यां ततोऽदित्यां विवस्वानभवत्सुतः ॥१०॥

इति भा० स्क० ९ अ० १ । वाल्मीकीयरामायण बा० सर्ग ७० ।

खट्वाङ्गोदीर्घबाहुश्च रघुस्तस्मात्पृथुश्रवाः ।
अजस्ततो महाराजस्तस्माद्दशरथोऽभवत् ॥१॥
तस्यापि भगवानेष साक्षाद्ब्रह्ममयो हरिः ।
अंशांशेन चतुर्धाऽगात्पुत्रत्वं प्रार्थितःसुरैः ॥२॥
रामलक्ष्मण भरतशत्रुघ्ना इति संज्ञया ।
तस्यानु चरितं राजन्नृषिभिस्तत्वदर्शिभिः ॥३॥
श्रुतं हि वर्णितं भूरि त्वया सीतापतेर्मुहुः ।

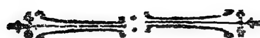
इति भागवत स्कन्द ९ अध्याय १० ।

अर्थ—श्रीशुकदेवजी कहने लगे कि हे परंतप ! मनुके वंश की अधिकता को सुनो । यदि यह वंश विस्तार पूर्वक कहा जाय तो सैकड़ों वर्ष में भी नहीं कहा जा सकता ७ ।

जो परमपुरुष नाना प्रकार के इन सब जीवों का आत्मा

है, केवल वही इस दृश्य संसार के स्थान में था और उसके अतिरिक्त कोई वस्तु न थी ८। हे महाराज उसी परमपुरुष के नाभि से सुवर्ण का कमल उत्पन्न हुआ, उससे चारमुख वाले ब्रह्मा उत्पन्न हुए ९। उस ब्रह्मा के मन से मरीचि उत्पन्न हुए, मरीचि से कश्यप हुए और कश्यप के अदिति नामक दक्ष की कन्या में विवस्वान् (सूर्य) पुत्र हुए १०। भागवत स्कन्द ९ अध्याय १।

खट्वाङ्ग से दीर्घबाहु, दीर्घबाहु से बड़े यशस्वी रघु, रघु से अज, अज से महाराज दशरथजी हुए थे १। देवताओं के प्रार्थना करने पर ब्रह्ममय साक्षात् भगवान् विष्णु अपने अंश के अंश द्वारा चार रूप करके इन्हीं दशरथ के पुत्र हुए २। इन चारों के नाम राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न था हे राजन्! इन सीतापति राम के बहुत बड़े चरित्र को यथार्थवेत्ता ऋषियों ने भली भांति वर्णन किया है, जिसे तुमने कितने ही बार सुना है ३।



नीचे क्रम से सूर्यवंश की परम्परा लिखते हैं यथा—

परमपुरुष (नारायण)

१ ब्रह्माजी	२३ युवनाश्व	४५ दिलीप
२ मरीचि	२४ त्रसद्दस्यु (चक्रवर्ती)	४६ भगीरथ
३ कश्यप	२५ मानधाता	४७ श्रुतला
४ विवस्वान (सूर्य)	२६ पुरुकुत्स	४८ नाभ
५ मनु (श्राद्धदेव)	२७ त्रसद्दस्यु	४९ सिन्धुदीप
६ इक्ष्वाकु	२८ अनरण्य	५० अयुतायु
७ विकुक्षि	२९ हर्यश्व	५१ ऋतुपर्ण
८ पुरञ्जय (ककुत्स्थ)	३० अरुण	५२ सर्वकाम
९ अनेना	३१ निबन्ध	५३ सुदास
१० पृथु	३२ सत्य (त्रिशंकु)	५४ सौदास
११ विस्वरन्धि	३३ हरिश्चन्द्र	५५ अश्मक
१२ चन्द्र	३४ रोहित	५६ मुलक
१३ युवनाश्व	३५ हरित	५७ ऐडविड
१४ शावस्त	३६ चम्प	५८ विश्वसह
१५ बृहश्व	३७ सुदेव	५९ खट्वाङ्ग
१६ कुवल्याश्वक (धुन्धुमार)	३८ विजय	६० दीर्घबाहु (दिलीप)
१७ दृढाश्व	३९ भरुक	६१ रघु
१८ हर्यश्व	४० बृक	६२ अज
१९ निकुंभ	४१ बाहुक	६३ महाराज दशरथ
२० बर्हणाश्व	४२ सगर	६४ श्रीरामचन्द्र*
२१ कृशाश्व	४३ असमञ्जस	६५ लक्ष्मण
२२ सेनाजित्	४४ अंशुमान	६६ भरत
		६७ शत्रुहन

* श्रीरामचन्द्रजी के राशी का नाम हिरण्यनाभ है यथा—

सूर्यवंशान्तर्गत निमिवंशीय क्षत्रियों का वर्णन करते हैं यथा—

निमि रिक्ष्वाकु तनयो वशिष्ठमवृतर्त्विजम् ।
आरब्ध सत्रंसोऽप्याह शक्रेण प्राग्वृतो स्मिभोः ॥१॥
ततः सीरध्वजो जज्ञे यज्ञार्थं कर्षतो महीम् ।
सीता सीराग्रतो जाता तस्मात्सीरध्वजः स्मृतः ॥१८॥
एते वै मैथिला राजन्नात्मविद्या विशारद ।
योगेश्वर प्रसादेन द्वन्द्वै मुक्ता गृहेष्वपि ॥२७॥

इति भागवत स्कन्द ९ अध्याय १३ ।

अर्थ—इक्ष्वाकुपुत्र निमि ने वशिष्ठजी को यज्ञ करने के लिए बुलाया, किन्तु वशिष्ठजी इन्द्र का यज्ञ प्रारम्भ कर चुके थे इससे उन्होंने कहा कि मेरा वरण तो इन्द्र पहिले ही कर चुके हैं १ । उसी समय से शतानन्दजी पुरोहित हुए ह्रस्वरोमा के पुत्र

क्षिप्रं मामपि कैकेयी प्रस्थापयितुमर्हति ।
हिरण्यनाभो यत्रास्ते सुतो मे सुमहायशाः ॥१३॥

इति वाल्मीकीयरामायण अयोध्याकांड सर्ग ७५ ।

अर्थ—मुझे भी कैकेयी शीघ्र ही बन में भेज देना चाहती है जहां मेरा हिरण्यनाभ और यशस्वी पुत्र अर्थात् लक्ष्मण है १३

नोट—श्रीरामचन्द्रजी का जन्म पुनर्वसु नक्षत्र के चतुर्थ चरणमें हुआ था, चन्द्रमा ३.कर्क राशि पर ३.२० तृतीय अंश बीसकला का अन्तर था इसलिए राशिनाम हिरण्यनाभहै

सीरध्वज थे, यज्ञ के लिए पृथ्वी जोत रहे थे तब हल के अग्र भाग से सीताजी उत्पन्न हुई थीं, इससे इनका नाम सीता है। ये मिथिला के वंश सब राजा आत्मज्ञानी और घर में रहकर भी द्वन्द्व से मुक्त रहे हैं २७।

महाराज इक्ष्वाकु से दो वंश होगया, एक सूर्यवंश, दूसरा मिथिलवंश, कहने मात्र का भेद है, उदाहरण, श्रीरामानुजसंप्रदाय में श्रीरामानन्द (रामावत) इनमें भी अनेक भेद हैं। कहने मात्र है, सबके मूल रामानुज स्वामी हैं।

१ इक्ष्वाकु	१५ कृतिरथ	२९ सतद्युम्न
२ निमि	१६ देमीढ़	३० शुचि
३ जनक,वि०,मि०	१७ विश्रुत	३१ सनद्वाज
४ उदावसु	१८ महाधृति	३२ ऊर्ध्वकेतु
५ नन्दिवर्धन	१९ कृतिरात	३३ अयय
६ सुकेतु	२० महारोमा	३४ पुरुजित
७ देवरात	२१ स्वर्णरोमा	३५ अरिष्टनेमी
८ बृहद्रथ	२२ ह्रस्वरोमा	३६ श्रुतायु
९ महावीर्य	२३ सीरध्वज (सीता)	३७ सुपार्श्वक
१० सुधृति	२४ कुसध्वज	३८ चित्ररथ
११ धृष्टकेतु	२५ धर्मध्वज	३९ मिथिल
१२ हर्यश्व	२६ कृतध्वज	४० क्षेमधि
१३ मरु	२७ केशिध्वज	४१ समरथ
१४ प्रतीपक	२८ भानुमान	४२ सत्यरथ

४३ उपगुरु	४८ सुभाषण	५३ चितहृव्य
४४ उपगुप्त	४९ जय	५४ द्युति
४५ अग्नि	५० विजय	५५ बहुलाश्व
४६ वस्वनन्त	५१ त्रिक	५६ कृति
४७ युसुधान	५२ शुनक	५७ महावसी

कुशवंश का वर्णन

भागवत स्कन्द ९ अध्याय १२ के अनुसार कुशवंश और उसकी स्थिति कहते हैं। जब कलितुग के अन्तमें सूर्यवंश का नाश होता हुआ महाराज मरु देखेंगे तब ये फिर उसकी रक्षा करेंगे। मरु योग सिद्धि करके अपने आधीन जीवन रक्खे हैं। सूर्यवंश कलि के अंतमें सुमित्र तक जायगा फिर मरु। इसके बाद मरुवंश की स्थिति होगी।

कलेरंते सूर्यवंशं नष्टं भावयिता पुनः ॥६॥
इक्ष्वाकूणामयं वंशस्सुमित्रांतो भविष्यति।
यतस्तं प्राप्य राजानं संस्थां प्राप्स्यति वै कलौ ॥१५॥



नीचे क्रम से कुशवंश की परम्परा लिखते हैं यथा —

१ कुश❋	१५ विधृति	२९ तत्तक
२ अतिथि	१६ हिरण्यनाभ	३० बृहद्वल म०केबाद
३ निषिध	१७ पुष्य	३१ बृहद्रण
४ नभ (नल)	१८ ध्रुवसंधि	३२ उरुक्रिय
५ पुण्डरीक	१९ सुदर्शन	३३ वत्सबृद्ध
६ क्षेमधन्वा	२० अग्निवर्ण	३४ प्रतिव्योम
७ देवनीक	२१ शीघ्र	३५ भानु
८ अनीह (अहिन)	२२ मरु	३६ दिवाक
९ पारियात्र पारिपात्र,	२३ प्रसुश्रुत	३७ सहदेव
१० दल	२४ संतानसंधि	३८ वीरवृहदश्व
११ वल	२५ अमर्षण	३९ भानुमान
१२ अर्क (औक)	२६ महुस्वान	४० प्रतिकाश्व
१३ वज्रनाभ	२७ विश्वसाह्व	४१ सुप्रतीक
१४ खगण(शवपन)	२८ प्रसेनजित	४२ मरुदेव

❋ सूर्य से लेकर इक्ष्वाकु, निमि कुश आदि राजाओं के अनेक प्रकार के वंश परम्परा चला है कितने ही क्रम व्यक्तिक्रम भी देखा जाता है बहुत दिन होने पर कुछ छुट भी जाता है। इसी प्रकार, नारायण, लक्ष्मी, विष्वकसेन, नाथमुनि, रामानुजस्वामी, रामानन्दस्वामी, बालानन्दजी. रामप्रसादजी, तन तुलसीदास आदि अनेक प्रकार हो जाने पर भी मूल पर विचार करेंगे तो रामानुजस्वामी के ही कहना पड़ेगा।

४३ सुनक्षत्र	४९ कृतञ्जय	५५ प्रसेनजित
४४ पुष्कर (अंतरिक्ष)	५० रणञ्जय	५६ क्षुद्रक
४५ सुतपा (सुवर्ण)	५१ संजय	५७ रणक (क्षुलिक)
४६ अमित्रजित	५२ शाक्य	५८ सुरथ
४७ बृहद्राज	५३ शुद्धोद	५९ सुमित्र
४८ बर्हि धर्म्म	५४ लाङ्गल [राहुल]	

अयोध्यानाम नगरी तत्रासील्लोक विश्रुता ।
मनुनामानवेन्द्रेण यापुरी निर्मितास्वयम् ॥७॥
इति वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग ५ ।

अर्थ—उस कोशलप्रान्त में लोक प्रसिद्ध अयोध्या 'अवध' नाम की एक नगरी थी जिस नगरी को मानव श्रेष्ठ मनुमहाराजने स्वयं बसाई थी ७। भगवान् पाणिनीय ऋषि के मतानुसार वंश शब्द का अर्थ व्याकरण से "अवधवंशीय" शब्द की सिद्धि करते हैं।

"अवधस्यराज्ञो वंशः अवधवंश तस्मिन्जायन्ते ये ते अवध वंशीयाः ❀" इति शब्दार्थः।

❀ वह सूर्यवंश अर्थात् अवधवंशीय क्षत्रियों के गोत्रादि का वर्णन करते हैं। गोत्रकश्यप। प्रवरत्रिक "कश्यप,वत्सार,नैरध्रुवाः" वेद शुक्ल यजुर्वेद। उपवेद धनुर्वेद। शाखा माध्यंदिनी। सूत्रगोभिल गृह्सूत्र। देवता शिव "कल्यणः" शिखा दक्षिण शिखा। गुण राजसगुण पाद दक्षिणपाद पुर कोशलपुर।

इति ब्राह्मणोत्पत्तिमार्तण्डः।

"अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि पाणिनीयं मतं यथा ।
शास्त्रानुपूर्वं तद्विद्याद् यथोक्तं लोकवेदयोः ॥१॥
प्रसिद्धमपि शब्दार्थमविज्ञातम बुद्धिभिः ।

इति पाणिनीयशिक्षा ।

अर्थ—अब हम यहाँ पर पाणिनीय के मत के अनुसार शिक्षा देते हैं। पहले भी यह शास्त्रों में देखा गया है कि लोक और वेद भी जिसको कथन करते हैं और शब्दों के अर्थ प्रसिद्ध भी हैं परन्तु मूर्ख न जाने तो इसकी क्या दवा है।

उक्त गोत्रादि का अर्थ वर्णन करते हैं। गोत्र में जो श्रेष्ठ ऋषि हुए हैं उनकी संज्ञा का प्रवर कहते हैं वेद वह हैं कि जिसके लिखे अनुसार वर्णाश्रमी स्वकर्म धर्म करते हैं। एक वेद में अनेक शाखायें होती हैं, उसमें वंशानुसार शाखायें बटी रहती हैं ऋग्वेद की २१ शाखाएँ, यजुर्वेद की १०९ शाखाएँ, सामवेद की १००० शाखाएँ और अथर्वणवेद की ५० शाखाएँ हैं।

सूत्र एक पुस्तक का नाम है, जिसमें वेदानुकूल जन्मा[दि] संस्कार होते हैं ब्राह्मणादिकों के षोडश संस्कारादि सूत्रों से ह[ी] किए जाते हैं चारों वेदों के चार सूत्र अलग अलग हैं। देव[ता] वह हैं कि जिसको इस गोत्र में उत्पन्न हुए ऋषि पूजते आते हैं शिखा यज्ञादि कर्मों में दक्षिणावर्त्ति घुमा कर ग्रन्थी लगावै। पा[द] यज्ञादि में दक्षिणपाद, पांव उठाने की विधि है। पुर पूर्व[ज] "इक्ष्वाकुवंशजों" का निवास स्थानको पुर कहते हैं देवता यज्ञा[दि] शुभ कर्मों में जिसके जो देवता हैं वे उनको मूल ऋचाओं, मं[त्रों]

अन्धः पश्यति चारेण शास्त्र हीनो न पश्यति ॥१९॥

इति गरुड़पुराण पूर्वखण्ड अध्याय १०।

अर्थ—अन्धा दूसरे के सहारे देख भी सकता है परन्तु शास्त्र हीन किसी प्रकार नहीं देख सकता १९।

से स्वस्त्ययन वाचन करते हैं।

मंत्र ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।

आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥

इति ब्रह्मोपनिषद्।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्। सूर्यवंश का उपास्यदेव नारायण है पृष्ट १से८ तक देखे। इति गायत्रीमन्त्रः।

टाड राजस्थान, प्रथमखण्ड "पहले आठ प्रकरण में" खड्गबिलास प्रेस बाँकीपुर से प्रकाशित १९१३ में प्रथमबारमुद्रित के प्रकरण पहिले पृष्ठ ११ में लिखा है कि सूयपुत्र वैवश्वत के सन्तान पूर्व में सिन्धु और गंगा के किनारे तक आये, और कोशल में अपनी पहिली बस्ति अर्थात् राजधानी अयोध्या वा अवध की नीवँ डाली थी। टाड उक्त पुस्तक के प्रकरण सातवाँ पृष्ठ २३३ में लिखा है कि दो शाखाएं कोशल "देश" से "सूर्य वंश की" निकली सोन नदी "आरा से पूर्व और पटनासे पश्चिम" के किनारे राज्तान को स्थापित किया। इस समय सूर्य्यवंशीय क्षत्रिय अवधवंशीय क्षत्रिय के नाम से पटना आदि के एक जिला में बहुत पाये जाते हैं और दूसरी लाहोर के पास कोहारी के दूरों में जा बसी।

अवधीय शब्द "अवधवंशीय" शब्द को व्याकरणसे सिद्ध करते हैं देखिये, अवधस्य राज्ञोपत्यं आवधः, आवधस्यायं आवधीयः तस्यापत्यं ४।१।९२ अण, तद्धिते ष्वचामादेः ७।२।११७। वृद्धिः। वृद्धाच्छः ४।२।११४ इति छ प्रत्ययः। आयनेयीनीयियः फढ खच्छघां प्रत्ययादीनां ७।१।२ इयः। इति आवधीय सिद्धम्।

"शक्ति ग्रहं व्याकरणोपमान कोशाप्त वाक्याद् व्यवहार तश्च धातु प्रकृति प्रत्यादीनां शक्ति ग्रहो व्याकरणाद्भवति इति" सिद्धान्तमुक्तावली शब्द खण्डकारिका ८१ के अंतर्गत। व्याकरण १ उपमान 'सदृश्य' २ कोश ३ आप्तवाक्य मनुस्मृत्यादि ४ व्यवहार ५ इत्यादि प्रमाण माने जाते हैं।

आदिवंश विशुद्धानां राज्ञां परमधर्मिणम्।
इक्ष्वाकुकुल जातानां वीराणां सत्यवादिनाम् ॥४४॥
अचिन्त्यान्यप्रमेयाणि कुलानि नरपुंगव।
इक्ष्वाकूणां विदेहानां नैषां तुल्यै ऽस्ति कश्चन ॥२॥
इति वाल्मीकीयरामायणे बालकांड सर्ग ७०।७२

अर्थ—यह सूर्यबंश "अवधवंश" आदि से ही विशुद्ध है धर्मात्मा है वीर है सत्यवादी है और इक्ष्वाकुकुल में उत्पन्न हुआ है ४४। आपका कुल बड़ा ही श्रेष्ठ बड़ा ही पवित्र है इक्ष्वाकु और विदेह की तुलना में दूसरा कुल नहीं है २।

आ ब्रह्म शुद्ध वंशानां* मातापित्रोः कुलेचयै।
न स्त्रियो व्यभिचारिण्यः पुरुषाश्चैवधार्मिकाः ॥१६॥
इति अगस्त्यसंहिता परमरहस्य अध्याय २५।

---

* महायोगिनः शठकोपस्योत्पत्तिः कथिता। तत्र ब्रह्मकुले

धर्मशील:, त्रि, धर्मधर्माचारेण शीलं स्वभावो यस्य सः धार्मिका: ।

कश्चिद्विष्णोरंशाशसंभवः। शठकोप इति ख्यातो महायोगी भविष्यति ।इति ब्रह्माण्डपुराणे क्षेत्र वैभव खंड। यह मद्रास हाता तंजावर राजकीय संस्कृत पुस्तकालय में है। सहस्र शाखां श्रीशठकोप स्वामीने सामवेद का गान किया उसीका नाम सहस्रगीति है पुस्तक पृष्ठ १९ देखे।

चकास्ति कुरुकापुरी शुचिनि ताम्रपर्णी तटे।
विरक्ति परिपक्तित्रमत्रियुगभक्ति भिर्वैष्णवैः ॥
दृढवत शठार्युरोवकुलसंपतद्भम्भर-
ध्वनिद्विगुण जृम्भण द्राविड़ वेद घोषोज्वला ॥४८८॥
अत्रत्यानां धर्मनिरतानां हरिभृतानामित्थमनुसंधताम्।
परिदृष्ट वते सहस्रशाखां परमां द्रविड़ संहितांन ॥२०६॥
गुरवे करवामनित्यमस्मै शठकोप महर्षये प्रणामान् ॥४८९॥

इति महाकवि श्रीमद्वेङ्कटाध्वरि विरचिता, विश्वगुणादर्श चम्पूः, कुरुकानगर श्रीशठकोपमुनि वर्णनम् ४१।

अर्थ—शुचि (पवित्र) ताम्रपर्णी नदी के तट पर दृढ़व्रत श्रीशठकोप गुरु के हृदय में वकुलामाला में संप्राप्त भ्रमर उनकी ध्वनि से द्विगुण ध्वनि द्रविड़वेद की घोस से उज्ज्वलकांति युक्त कुरु का पुरी और विरक्त विषयों से ऐसे तीनों गुणों मे विष्णु भक्तियुक्त वैष्णवों करके प्रकाशित है ४८८। इस कुरु का पुरी के निवासी धर्मनिरत पुण्यकर्मपरायण हरिभक्तसेवकों का यह उप-

ब्रह्मा से लेके शुद्धवंश माता पिता और कुल ये तीनों व्यभिचार से रहित हों अर्थात धर्मात्मा ही धार्मिक कहाता है।

महर्षि आदित्यकृत आदित्यसंहिता से भी विदित होता है कि राजाजनकजी आदित्य ऋषि से कहते हैं कि मैंने श्रीरामचन्द्र पर्यन्त सूर्यवंश की कथा सुनी, जिसे सुन के महा आनन्द हुआ, अब आप कृपा कर यह कहिये कि कुश का वंश कबतक चलेगा, मुझे यह सुनने की इच्छा हुई है यथा—

रोक्त प्रकार से नित्यानुसंधान है २०६। चतुःसहस्र शाखामय परम (महान) द्रविड़भाषामयी संहिता हम वैष्णवों के हित करने वाली तपस्या करके साक्षात उत्पन्न किया जिन्होंने, ऐसे परमगुरु इन श्रीशठकोप महर्षि के लिए नित्य (कोटिशः) प्रणामों को करते हैं ४८९। (वेदघोषोज्वला ४८८) जब श्रीशठकोपस्वामी और अन्य भगवद्भक्तों के पास वेदध्वनि होती थी तो इससे मालूम हुआ कि ये द्विज (ब्राह्मण) थे और निम्म ग्रन्थों से भी पता लगता है, नारदपञ्चरात्रान्तर्गत बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ७ श्लोक ७१ यथा—

शकाब्दा १८४ में निर्णय सागर प्रेस बंबई में पंचसावृत्ति छपा यह पुस्तक आनंदाश्रम प्रेस पुना में छपी है वहीं से प्राप्त होती है।

पञ्चरात्रस्य कृत्स्नस्य वक्ता नारायण स्स्वयम ।
यथागमं यथान्यायं निष्ठा नारायण प्रभुः ।

इति भार, शा, मो, ३५०, ६७, ६८ २०।

आदित्य उवाच—

ते धन्यः सुखिनश्चैव वंशवृद्धिं व्रजंति च।
दिर्घायुष्यं धनं धान्यं धर्मवृद्धिं व्रजंतिहि।
राज्ञां पुण्यवतां कीर्तिं श्रुत्वा पापौघनाशिनीम् ॥७०॥

इति आदित्यसंहिता अध्याय ९८।

अर्थ—वे लोग धन्य एवं सुखी हैं पाप समूह को नाश करनेवाली पुण्यवान् राजाओं की कीर्ति को सुनकर चिरायुष्मान् एवं धनधान्य सम्पन्न तथा धर्मबुद्धि को प्राप्त करते हैं ७०।

जनकउवाच—

श्रुता मे सूर्यवंशस्य रामचन्द्रावधि कथा।
येनजातो महानन्दो वचसामप्यगोचरः ॥१॥
इदानीं मुनि शार्दूल कथ्यतां कृपया प्रभो।
कुशवंशस्य यावधि श्रोतुमिच्छा प्रवतते ॥२॥

आदित्यउवाच—

कथ्यते वै महाराज कुशवंशस्य या ऽवधिः।
श्रयतां त्वया मनसा गृहीतेन शुभे न वै ॥३॥
कुशवंशे महाराज मनुजाः धर्मस्थापकाः।
अनेके वै भविष्यन्ति क्षत्रिया वै धनुर्धराः ॥४॥
अतिथिर्निषधश्चैव क्षेमधन्वा जनाधिपः।
वज्रनाभो ध्रुवस्संधिः सुदर्शनोमहाबलः ॥५॥
अग्निवर्णादि भूपालः धर्म्मशीलः प्रतापवान्।
रक्षिता पृथिवी येन कृत्वा ऽधर्मस्य निग्रहम् ॥६॥

अवधवंशीय संज्ञाः क्षत्रिया अग्नि वर्णजाः ।
कलौखलु भविष्यंति भारत* मध्यवर्तिनः ॥७॥

इति आदित्यसंहिता अध्याय ९९ ।

अर्थ—हे मुनि शार्दूल । मैंने रामचन्द्रपर्यन्त सूर्यवंश की कथा सुनी कि जिसको सुनके महाआनन्द हुआ अब आप कृपा करके यह कहिए कि कुश का वंश कबतक चलेगा, मुझे यह सुनने की इच्छा हुई है १-२ । ऋषि बोले कि हे महाराज आप शुभ

---

* उत्तरं यत समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम् ।
वर्षं तद्भारतं नाम नव साहस्र विस्तृतम ॥१॥
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गञ्च गच्छताम् ॥२॥

इति आग्नेयपुराण अध्याय ११८ ।

आसमुंद्रातु वै पूर्वादसमुद्रात्तु पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरे गिर्यो आर्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥२२॥

इति मनुस्मृति अध्याय २ ।

भगवान् पाणीनीय, आदिरन्त्येन सहेता १।१।१७१
अन्त्येनेता सहित आदिर्मध्यगानां स्वस्य च संज्ञास्यात् ।
इति सिद्धान्तकौमुदी संज्ञाप्रकरणे ।

हिन्दूशब्दार्थ—हीनं दूषयतीति हिन्दू अर्थात् कोई दूषण जिसमें न हो उसे हिन्दू कहते हैं। इति शब्दकल्पद्रुम कोषे । हीनञ्च दूषयत्येव हिन्दूरित्युच्यते । मेरुतन्त्रप्रकाश । हिनश्ति-तपसा पापं दण्डेन दुष्टमानवान् । हन्तिशत्रु गामीनश्च सिद्धि हिन्दुर्विधीयते ।

नाम से कुश के वंश की अवधि सुनिये मैं कहता हूँ ३। कुश के वंश में धर्म के स्थापन करनेवाले धनुषधारी अनेक क्षत्रिय होंगे४। अतिथि, निषिध, क्षेमधन्वा, वज्रनाभ, ध्रुवसंधि और सुदर्शन महाबली होंगे ५। अग्निवर्णादि राजा धर्मशील [illegible] पृथिवी की रक्षा करनेवाले और अधर्म के रोकनेवाले होंगे ६। अग्निवर्ण का वंश निश्चय करके कलियुग में चलेगा और भारतवर्ष में अवधवंशीय क्षत्रिय कहावैंगे ७। और मत्स्यपुराण के ११ अध्याय के आदि भाग और १२ अध्याय के ५५ श्लोक से ५७ श्लोक तक देखने से ज्ञात होता है कि महाभारत में कुशवंश के राजा थे, महाभारत समाप्त होने पर नल, वीरसेन, नैषधादि कुश के वंश में हुए। इन्हीं का वंश कलियुग में चला और महाभारत कलि के शुरू में हुआ है। इसी प्रकार इक्ष्वाकुवंश का परमपरा चला यथा

विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवे ऽब्रवीत।
एवं परम्परा प्राप्तमिमं राजर्षयोविदुः ॥ २ ॥
इति श्रीमद्भागवतगीता अध्याय ४।

दूसरा उदाहरण

द्राविड़ाश्चैव तैलङ्गा कर्नाटा मध्यदेशगाः।
गुर्जराश्चैव पञ्चैते द्रविड़ा परिकीर्तिताः ॥२॥
सारस्वताः कान्यकुब्जा उत्कला मैथिलाश्चये।
गौडाश्च पञ्चधाश्चैव दशविप्रा प्रकीर्तिताः ॥३॥
इति स्कन्दपुराण उत्तरार्ध सह्याद्रिखण्ड अध्याय १।

अर्थ—द्रविड़ १ तैलंग २ करनाठक ३ मध्यदेशग ४ और

गुजराती ५ ये पञ्चद्रविड़ हैं। सारस्वत १ कान्यकुब्ज २ उत्कल ३ मैथिल ४ और गौड़ हैं ५ ये पञ्चगौड़ हैं दोनों मिल के दश हैं। इनमें भी अनेक भेद हैं, विशेष जानना हो तो "वर्णव्यवस्था-दिग्दर्शन" देखे। इसी प्रकार श्रीरामानुजसम्प्रदाय में श्रीरामानन्द स्वामीजी हुए हैं उस समय तक सब व्यवस्था एक रहा बाद में अनेक हो गया आचार्य सब भ्रमण करने में सिथिलता कर दिये इसके परिनाम उलाटा होगया कुछ व्यक्तियों ने अपने को वैरागी जाति कबूल करलिया। उदाहरण यथा—

शनकैस्तु क्रिया लोपादि मा क्षत्रिय जातयः।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणा ऽदर्शने न च ॥४३॥

इति मनुस्मृति अध्याय १०।

अर्थ—ब्राह्मण के अभाव से क्षत्रिय और वैश्य यज्ञोपवीत आदि क्रिया के लोप हो जाने से धीरे २ लोक में शुद्रता को प्राप्त होगये जैसे नूतन परम्परा वाले महात्माओं का अपने आचार्यों को त्याग देने से यथा—

गुरोरपन्हवात्त्यागात्साम्यद्धि स्मरणादपि।
लोभमोहादि भिश्चान्यैरपचारैर्विनश्यति।

इति भरद्वाजसंहिता अध्याय ४।

अर्थ—गुरू से छल कपट या गुरू का त्याग करने से गुरू की बराबरी करने से या गुरू को भुला देने से तथा नाना प्रकार के संसारिक लोभ काम क्रोध मोहो से एवं भाँति २ के अपराधों

से यह जीव अधम गति को प्राप्त होकर विनष्टप्राय हो जाता है।

ऐतिहासिक पृष्ठों में श्रीरामानन्दियों का विस्तृतविवरण १४ वीं शताब्दी के अन्त से आरम्भ होता है। ये लोग बराबर श्रीरामानुज सम्प्रदाय की गुरुपरम्परा प्रधानमठ श्रीतोताद्री को अपनी गादी मानते आये हैं। और इनके ग्रन्थों एवं ऐतिहासिक प्रकरणों में भी श्रीरामानुज सम्प्रदाय की गुरुपरम्परामें ही इनकी स्थिति का पूर्ण वर्णन सिद्धान्त है। और तोताद्रिमठ के प्राचीन लेखों से भी पूरा २ पता चलता है कि इनके पूर्वज महापुरुष सिद्ध सन्तों जो दक्षिण यात्रा करते हुए तोताद्रिमठ गये उन्होंने अपनी गुरुपरम्परानुगत मूल गुरुओं की गद्दी यही है, इस निश्चित सिद्धान्तानुसार उक्त गद्दी को साष्टाङ्ग कर भेंट पूजा दे अपने आपको उक्त गद्दी का अनुयायी घोषित किया इसी प्रकार यह सिद्धान्त श्रीसम्वत् १९७२ पर्यन्त दृढ रहा इसी कारण श्री १००८ श्रीतोताद्रिस्वामीजी महाराजके समस्त श्रीरामानन्दियों ने सं० १९७२ में अपने आचार्य मूल गुरुगद्दीस्थ आये जानकर के ही लोकोत्तर स्वागत किया था बहु संख्यक श्रीरामानन्दीय श्रीवैष्णवगण आज भी उक्त गद्दी को अपनी मूल गुरु गद्दी मानते हैं। उदाहरण द्वारा बताते हैं—

नं० १—श्रीसम्प्रदाय दिक्प्रदर्शन नामक पुस्तक विक्रम सम्वतसर १९७९। ईसवीय वत्सर १९२३ में छपा। सम्पादक श्रीमदयोध्या श्रीबृहत्स्थानाधिपतिभिः वैष्णवभूषण महन्त श्रीराम-मनोहरप्रसाद शुभाह्वयैः जिज्ञासु वैष्णवजनोपकाराय। निवेदनम्

हमारे श्रीरामानन्दस्वामीजीकृत श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर और श्रीरामार्चनपद्धति ये दोनों ग्रन्थ अन्दाज से छः सौ वर्ष पहले के हैं आजतक उपलब्ध हैं। इन ग्रन्थों के आदिमें श्रीरामानुजस्वामी जी का मंगलाचरण होने से हम सब श्रीरामानन्दीय वैष्णव श्रीरामानुजसम्प्रदाय के अन्तर्गत हैं। श्रीरामानुजसम्प्रदाय का श्रीसम्प्रदाय नामान्तर होने से हम सब लोग भी श्रीसम्प्रदायी हैं।

नं० २—श्रीरामानन्दस्वामीजी के गुरुमहाराज श्रीराघवानन्दजी के बारे में श्रीरामानन्दजी के शिष्य श्रीअनन्तानन्दस्वामी जी कृत "श्रीहरीभक्तिसिन्धुजा बेला" नामक पुस्तक का मन्त्र प्रकरण की ४ तरङ्गमें कहा है कि—

बन्दे श्रीराघवाचार्य्यं रामानुज कुलोद्भवम्।
याभ्यामुत्तरमागत्य राममंत्र प्रचारकम् ॥२॥

नं० ३—इसी प्रकार श्रीअवध में बड़ी जगह के श्रीमान् श्रीरघुनाथप्रसादजी विरचित "निजगुरु" नामक पुस्तक के तीसरे अध्याय में लिखा है कि—

शृणुवत्स प्रवक्ष्यामि गुरुवर्यं परम्पराम्।
रामानुजान्वये जातो रामानन्दः प्रतापवान् ॥

नं० ४—विज्ञापनपत्रम, विक्रमीय सम्वत् १९७७ फाल्गुन कृष्ण ८। हमसब श्रीरामानुजीयान्तर्गत श्रीरामानन्दस्वामीजी की गुरुपरम्परा में हैं १ 'हस्ताक्षर महन्त रमामनोहरप्रसाद अयोध्या महन्त रामदास राजगोपाल २ महन्तसरयूदास ३ हरद्वारीपट्टी

हनुमानगढ़ी महन्त कमलदास खुद गढ़ी ४ महन्त राघवदास पट्टीउज्जैनिया ५। गढ़ी, महन्त गिरधारीदासजी ६। राघोजीका मन्दिर रामघाट। जन्मस्थान महन्त रामकिशोरदास ७ महंत नारायणदास रतनसिंहासन। ह० मोहनदास अधिकारी निर्मोही, जन्मभूमि ९। ह० कुञ्जबिहारीदास, अमरदास स्थान १०। रामकोट, ह० हितनारायणदास अधिकारी नरहनमन्दिर ११। ह० रामपदारथदास सीढ़ीपुर का मन्दिर १२। ह० पं० रामनारायणदास शृङ्गारभवन रामकोट, निवेदक पं० रामनारायणदास राजगोपाल पाठशाला के अध्यापक। हरीसिंह प्रेस, फैजाबाद।

नं० ५—श्रीरामकवीरजी की पञ्चमात्रा में लिखा है कि गोरखनाथने प्रश्न किया है कि—

कौन तुम्हारा आदि मूल है, कौन तुम्हारी शाखा।
कौन ध्यान में रमता योगी कौन पुरुष ने भाषा॥

उत्तर—आदि नारायण* मूल हमारा रामानुज की शाखा।
र रंकार में रमता योगी श्रीगुरुरामानन्दजी भाषा॥

नं० ६—प्रयाग के श्रीकृष्णानन्द बाघम्बरीजी ने "श्रीवैष्णवाचार प्रदीप" नामक ग्रन्थमें भी लिखा है कि, श्रीरामानंदियों की उत्पत्ति श्रीरामानुज सम्प्रदाय से ही हुई है।

नं० ७—जयपुर राजसभा के प्रधान पं० श्रीदुर्गाप्रसादजी

* नारायणात्परो देवो नास्ति मुक्तिप्रदो नृणाम् ७९।
इति पद्मपुराण उत्तरखण्ड अध्याय २५१। आनन्दप्रेस पुना

एवं पं० श्रीकल्याणवल्लभशास्त्रीजी ने "चतुर्वर्णशिक्षा" २ के भिक्षुशिक्षा प्रकरण में लिखा है कि "अथ श्रीरामानुजाय इष श्रीरामानन्दार्योऽपि" अर्थात् श्रीरामानुजस्वामीजी के शिष्य परम्परा में श्रीरामानन्दजी हैं। इस विषय में मिथिला प्रान्तीय तथा अपर प्रान्तीय विद्वानों का भी हस्ताक्षर २४३ के सम्मति, महन्त सीतारामदासस्य साधुपाठशाला दुर्गाकुंड काशी।

नं० ८—श्रीसीतारामस्तोत्र १ श्रीभगवत्पूजन २ चतुर्दशरहस्य ३ ज्ञानरसिकावली ४ श्रीरामानन्दस्वामी लिखित "गुरुपरम्परा" ५ श्रीवैष्णवधर्मनिर्णय ६ द्वारकामाहात्म्य ७ श्रीवैष्णवमत नोतर्य ८ लघुज्ञानप्रकाश ९ श्रीवैष्णवसिद्धान्तसार १० पाखण्डदलन ११ श्रीरामस्तवराजटीका १२ श्रीसीतारामानुजचतुर्दशनिकेतन १३ दिव्यतत्वकौमुदी १४ श्रीवैष्णवधर्मसंदर्भ १५ भारतीयचरिताम्बुनिधि १६ कार्यविवरण १७ निर्णयपञ्चकसंग्रह १८ तुलसीग्रन्थावली १९ सत्यार्थप्रकाश २१ समुलास २० श्रीभारतचरितचन्द्रिका २१ भारतवर्षीय उपासकसम्प्रदाय २२ भक्तउरवसी २३ भक्तमाल २४ श्रीभागवताचरितामृतसार २५ श्रीहरीभक्तसहस्रनाम २६ इतनी पुस्तकों में श्रीरामानुजस्वामी की परम्परा में श्रीरामानन्दस्वामीजी हैं विशेष जानना हो तो पं० श्री रामटहलदासजी सम्पादित वैष्णवमताब्जभास्कर और परिशिष्ट भाग देखें पं० श्रीवलभद्रदासजी सम्पादित वैष्णवमताब्जभास्कर और प्रस्तुत प्रसंगसिद्धी यह दोनों ग्रन्थ देखे।

नं० ९—श्रीवैष्णव श्रीटीलास्वामिना वंशोद्भव परमहंस

जानकीवल्लभदासजी ने श्रीविक्रमीय संवत् १९८३ में "गतिबोध" नामक पुस्तक लिखी है जो दो भाग में है उसमें अपनी संप्रदाय बतायी है कि मेरी सम्प्रदाय श्री "शेष, रामानुज, विष्णु" श्रीरामचन्द्रजी, श्रीजानकीजी, हनुमानजी, ब्रह्माजी, वशिष्टजी, इत्यादि गुरुपरम्परा बनी है "इसका संचालक भगवतदास है" हनुमानजी ने ब्रह्मा को मन्त्र कैसे दिया ये तो अञ्जनी नाम की बानरी से पैदा हुए हैं और सब शरीर ब्रह्मा के बनाये हैं ब्रह्माके गुरु कदापि नहीं हो सकते हैं, क्योंकि वह रुद्रावतार हैं यथा वज्रदेहेतिचोक्ता हे रुद्रावतार पदं तथा १२ । इति स्कन्दसंहिता अध्याय ३२ ।

महाराजिक साध्याश्च रुद्राश्च गणदेवता २० ।
इति अमरकोष स्वर्गवर्गः ।

प्रतिकल्प में ब्रह्मा से रुद्र की उत्पत्ति होती है ३४ । इति शिवपुराण बायुसंहिता पूर्वखंड अध्याय १४ । और सब कल्प में रुद्रावतार हनुमानजी के होता है ।

भागवत १०।१४।१३ में लिखा है कि "नारायण की नाभी कमल से ब्रह्मा पैदा हुए" । भागवत ३।१२।८ से २१ तक देखो । "विष्णु से कमल कमल से ब्रह्मा और ब्रह्मा से शिवादि ऋषि हुए" भागवत ५।५। २३ "शिव 'रुद्र' ब्रह्मा के बीर्य से पैदा हुए" विज्ञ पाठक विचारें यदि हनुमानजी रुद्रावतार हैं तब ब्रह्मा हनुमानजी के पिता हुए, नूतनपरम्परावाले महात्माओं ब्रह्मा के गुरु कहके नीहनुमानजी के गारि दे रहे हैं इनके कवन गति होगी । भगवान इने सुबुद्धी देवे ।

एते कलौयुगे भाव्याः सम्प्रदाय प्रवर्तकाः।
सम्वत्सरे विक्रमस्य चत्वारः क्षिति पावना ॥२५॥
इति गर्गसंहिता अश्वमेधखण्ड अध्याय ६१।

याने कलियुग में विक्रमीय संवत्सर के अन्तर्गत वैष्णव सम्प्रदाय के चलानेवाले चारआचार्य होंगे, वामनभगवान् के अंश से विष्णुस्वामी होंगे, ब्रह्मा के अंश से माध्वाचार्यस्वामी होंगे, शेषभगवान् के अंश से रामानुजस्वामी होंगे, और सनक के अंश से निम्बार्कस्वामी होंगे, यह चारो आचार्य वैष्णवधर्म को चलाकर पृथ्वी को पवित्र करेंगे। यथा—

रामांङ्केऽन्तो वह्निपूर्वो नमोऽन्तः स्यात्षडक्षरः।
तारको मन्त्रराजोऽयं संसार विनिवर्त्तकः ॥५॥
इति बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ७।

अतः कान्ते त्वयाकार्या श्रद्धामन्त्र धारणे।
संधारय मुमुक्षूणां प्रपन्नानां ममाज्ञाया ॥१२१॥
ओमित्युक्त्वा सा देवी चक्रशङ्खौ भुजद्वये।
प्रयोजनान्तरंहित्वा मन्त्रराज मथोदधौ ॥१२२॥
इति बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद १ अध्याय ३।

हे कान्ते (प्रिये) शङ्ख चक्र और अष्टाक्षर नारायण, मन्त्र-राज को धारण करो और मुमुक्षु और प्रपन्न जनों को धारण कराओ। यह कहने पर श्रीजी ने उक्त सभी को धारण करलिया।

देव्यानु बोधितः श्रीमान् विष्णुः सर्व जनेश्वरः।
आहयामास तां देवीं तारकं ब्रह्मवाचकम् ॥७२॥

कृतकृत्या तदा लक्ष्मी लब्ध्वा मन्त्रं षडक्षरम् ।
ददौ प्रीत्या ततो देवी विष्वक्सेनाय तारकम् ॥७३"

इति सदाशिव संहिता अध्याय ९।

अर्थ—श्रीमन्नारायण ने लक्ष्मीजी को राममन्त्र और अष्टाक्षर नारायणमन्त्र दोनों दिये, लक्ष्मीजी ने विष्वकसेनजी को दोनों मन्त्र दिए, क्रमशः प्रचार हुआ।

कालेनऽऽच्छादितो धर्मो मदीयोऽयं वरानने ।
तदा मया प्रवृत्तोयं तत्कालोचित मूर्तिना: ॥७०॥
विष्वक्सेनादि भिर्भक्तै: शठारि प्रमुखैर्द्विजै: ।
रामानुजे न मुनिना कलौ संस्था मुपेष्यति ॥७१॥

इति बृहद्ब्रह्मसंहिता पाद २ अध्याय ७

अर्थ—विष्णुभगवान् लक्ष्मीजी से कहते हैं कि हे बरानने काल करके धर्म आच्छादित हो जायगा तब मैं तत्काल उचित मूर्ति धारण करूंगा विष्वक्सेनादि शठारि प्रमुख द्विज होंगे "द्वाभ्यां संस्काराभ्यां द्विज: जायते इति" रामानुज नाम के मुनि कलियुग में धर्म का स्थापन करेंगे वैष्णवधर्म के प्रवर्तकाचार्य नाम से प्रसिद्ध होंगे।

तैलङ्गा द्राविड़ाश्चैव दयावन्तो जनाभुवि ।
पञ्चक्रोशेतु विविधा आचार विविधास्थिता ॥४६॥
एवं भक्ति विचारश्च नान्यस्य च विचारणा ।
केचित्तु वैष्णवा भक्ता शिवभक्ताश्च केचन ॥४७॥
इति स्कन्दपुराणे उत्तररहस्य सह्याद्रिखण्डे अध्याय ४ ।

कृतादिषु प्रजा राजन् कलाविच्छन्ति सम्भवम् ।
कलौ खलु भविष्यन्ति नारायण परायणः ॥३८॥
क्वचिच्क्वचित् महाराज द्राविड़ेषु च भूरिशः ।
ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी ॥३९॥
कावेरी च महापुण्या प्रतीची च महानदी ।
ये पिबन्ति जलं तासां मनुजा मनुजेश्वरः ।
प्रायोभक्ता भविष्यन्ति वासुदेवे ऽमलाशया ॥४०॥
इति श्रीमद्भागवत् स्कन्द ११ अध्याय ५ ।

अर्थ—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर के मनुष्य भी इस कलियुग में जन्म लेना चाहते हैं, हे राजन् इस कलियुग में कितने ही भगवद्भक्त महापुरुष जहाँ तहाँ जन्म लेंगे उनमें से अधिकतर द्रविड़ देश में होंगे जहाँ कि ताम्रपर्णी कृतमाला, पयस्विनी, महा पवित्र कावेरी प्रतीची और महानदी आदि नदियाँ बहती हैं, हे राजन् जो लोग इन नदियों का जल पीते हैं वे प्रायः शुद्धचित्त होकर भगवान् वासुदेव के भक्त हो जाते हैं ।

द्राविड़ेषु महापुण्यं श्रीरङ्गाख्यनिकेतनम् ।
*शिलारूपेण तिष्ठामि यत्राहं कमलाप्रिये ॥६३॥

---

* गवां सर्वाङ्गजं क्षीरं स्रवेत् स्तनमुखाद् यथा ।
तथा सर्वगतो देवः प्रतिमादिषु राजते ।
इति कुलार्णवतन्त्र ।
शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती ।
मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता ॥१२॥
इति श्रीमद्भागवते स्कन्द ११ अध्याय २७ ।

कावेरी तोयरूपेण मामवेहि निरन्तरम् ।
यत्तोय पानादनघे निष्पापो जायते नरः । ६४॥
द्वापरान्ते कलेरादौ पाषण्ड प्रचुरे जने ।
रामानुजेति भविता विष्णु धर्म प्रवर्तकः ॥६५॥
श्रीरङ्गेशदयापात्रं विद्धिरामानुजमुनिम् ।
येन संदर्शितः पन्था वैकुण्ठाख्यस्यसप्मनः ॥६८॥

इति बृहद्ब्रह्मसंहिता पद २ अध्याय ७ श्लोक १ से २१ तक देखे

अर्थ—विष्णुभगवान् लक्ष्मीजी से कहते हैं कि हेकमल प्रिये "लक्ष्मी" मैं महापुण्य द्रविड़देश में श्रीरंगमन्दिर में शिला-मूर्ति रूपमें विराजूंगा ६३। वहां पर जो कावेरीनदी है उसमें जलरूप होकर रहूँगा हे अनघे "पापरहितलक्ष्मी" जो मनुष्य उस जल का पान करेंगे वह पापोंसे रहित हो जायँगे ६४। और जिस समय द्वापर के अंतमें और कलियुग के प्रारम्भ में पाखंडी मनुष्य पैदा होंगे और वह पाखंडी वैष्णवधर्म का लोप करने का प्रयत्न करेंगे। तब रामानुज नाम से विष्णुधर्म "वैष्णवधर्म" के चलाने वाले प्रकट होंगे और उन श्रीरामानुजमुनि को तुम श्रीरंगभगवान् का दयापात्र जानो और यही वैकुण्ठ का रास्ता बतायेंगे ६७। ६८।

श्रीरामानुज पुनि श्रीरामतारक मंत्र के उपदेष्टा उपदेश करनेवाले होंगे इसी काम में यह संसार भर में प्रसिद्ध होजायँगे।

अर्थ—अष्टधातु १ काष्ठ २ लोहा ३ लिपा हुआ ४ चित्र ५ बालु के मूर्ति ६ मानसिक ध्यान में मूर्ति ७ पाषाणविग्रमःपुजा करना चाहिये । ८

सम्प्रदाय विहीनाये मन्त्रास्ते निष्फलाय्स्मृताः।
तस्माच्च गमनं ह्यस्ति सम्प्रदाये नरैरपि ॥२६॥
इति गर्गसंहिता अश्वमेधखण्ड अध्याय ६१।

अर्थ—जो मनुष्य सम्प्रदाय विहीन है उनका सब मन्त्र "याने मन्त्रजाप" निष्फल हो जाता है, इससे सब मनुष्यों को सम्प्रदाय के ही मार्ग पर चलना चाहिए २६। और सम्प्रदाय शब्द की व्युत्पत्ति भी ऐसी ही होती है, देखिये "सम्प्रदाय" पुं—सं + प्र + दा + य + घञ्, आतोयुक् चिण्कृतोः ७।३।३३ इति युक्, गुरुपरम्परा गत सदुपदेशः।

"आचारः परमोधर्मः आचारः परमं धनम्।
आचारः परमाविद्या आचारः परमागतिः ॥५५॥
आचारः हीनः पुरुषो लोके भवति निन्दितः।
परत्र सुखीनस्यात्तस्मादाचारवान्भवेत् ॥५६॥
इनि शिवपुराण वायवीयसंहिता उत्तरखंड अध्याय १४।

नोंट—मनुस्मृति अध्याय १ श्लोक १०७ से ११० तक भी देखें।

प्रथमोऽनन्तरूपश्च द्वितीयो लक्ष्मणस्तथा।
तृतीयो बलरामश्च कलौ रामानुजोमुनिः।
इति श्रीशारीरकमीमांसा श्रीभाष्य भूमिका।

सर्वमङ्गल माङ्गल्यं सर्वोपद्रव नाशनम्।
वन्दे रामानुजाऽर्यस्य नित्यं पादम्बुजद्वयम्।
हरिः ओं नरायणेति तत्सत्।

इति श्रीस्वाम्युपनामक धरणीधराचार्य्य विरचिते श्रीसम्प्रदाय मीमांसा श्रीबालसूर्य्यप्रभाटीका सहितः समाप्तम्।

❀ परिशिष्ट भाग ❀

—:❀:—

शतेषु जायते शूरः सहस्रेषु च पण्डितः ।
वक्ता शत सहस्रेषु दाता भवति वा न वा ॥५८॥
न रणे विजयाच्छूरोऽध्ययनान्न च पण्डितः ।
न वक्ता वाक् पटुत्वेन न दाता चार्थ दानतः ॥५९॥
इन्द्रियाणां जये शूरो धर्मं चरति पण्डितः ।
हित प्रायोक्ति भिवक्ता दाता सन्मान दानतः ॥६०॥

इति व्यासस्मृति अध्याय ४ ।

अर्थ—सौ में एक शूरवीर, हजार में एक पण्डित, और लाख में एक वक्ता होता है, किन्तु दाता हो या न हो, रण में जतने ही से शूर नहीं होता, पढ़ने ही से पण्डित नहीं होता। इन्द्रियों को जीतनेवाला शूरवीर होता है, शास्त्रोक्त धर्म करने वाला पण्डित होता है, हित का उपदेश करनेवाला वक्ता होता है और सम्मान पूर्वक दान देनेवाला दाता होता है ५८ से ६० तक।

दश धर्मं न जानन्ति धृतराष्ट्र ! निबोधताम् ।
मत्तः प्रमत्तः उन्मत्तः श्रांतः क्रुद्धो बुभुक्षितः ॥१०१॥
त्वरमाणश्च लुब्धश्च भीतः कामी च ते दश ।
तस्मादेतेषु सर्व्वेषु न प्रसज्जन्ति पंडिताः ॥१०२॥

इति महाभारत उद्योगपर्व अध्याय ३३ ।

वेदो ऽखिलस्य धर्ममूलं स्मृति शीले च तद्विदाम् ।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च ॥६॥

इति याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ श्लोक में भी देखो ।

कुम्भमहापर्वयोग ।

पुरा प्रवृत्ते देवानां दैत्यैः सह महारणे ।
समुद्रमथनात्प्राप्तं सुधाकुम्भं महीतले ॥१॥
तस्मात्कुम्भात्समत्क्षिप्तः सुधाविन्दुर्महीतले ।
यत्र यत्रापृतत्तत्र कुम्भपर्व प्रकल्पितम् ॥२॥
विष्णुद्वारे तीर्थराजे ऽवन्त्यां गोदावरीतटे ।
सुधाविन्दु विनिक्षेपात्कुम्भपर्वेति विश्रुतम् ॥३॥

अर्थ—प्राचीनकाल में देवता और दैत्यों से जब घोर युद्ध हो रहा था उसी समय देवता और दैत्यों ने मिलकर समुद्र का मथन किया, समुद्रमथन से, एक अमृत का कुंभ "घड़ा" प्राप्त हुआ। उस कुंभ को देवताओं ने लेकर भागा तो उनके भागने से अमृत का विन्दु घड़े में से पृथ्वी के ऊपर जिस जिस स्थान पर गिरा. उस उस स्थान पर पूर्वाचार्य्यों ने कुम्भपर्व कल्पना किये। पहिला पर्वस्थान हरिद्वार में १ दूसरा पर्वस्थान प्रयागराज में २ तीसरा पर्वस्थान गोदावरीनदी के तट पर "नासिक"में ३ चौथा पर्वस्थान उज्जैननगरमेंकल्पना किये ।१।२।३

हरिद्वार मे कुम्भपर्वयोग ।

पद्मिनी नायको मेषे कुंभराशि गतो गुरुः ।
गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामा तदोत्तमः ॥१॥

कुम्भराशिं गते जीवे यद्दिने मेषजे रवौ ।
हरिद्वारे कृतं स्नानं पुनर्जन्म न जायते ॥२॥
लोके कुंभ इति ख्यातो जानीयात् सर्वकामदः ।
गङ्गायाः स्नानमाहात्म्यं नालं वक्तुं चतुर्मुखः ॥३॥

अर्थ—हरिद्वार में कुम्भपर्वयोग तब होता है जब कि कुंभ राशि पर बृहस्पति हों और मेष राशि के सूर्य्य जिस दिन हों उस दिन लोक में विख्यात कुम्भपर्व हरिद्वार में होता है जिस पर्व के माहात्म्य को ब्रह्मा अपने चारों मुखों से वर्णन करने में असमर्थ हैं ।१।२।३।

प्रयागराज में कुम्भपर्वयोगः ।

मकरे च दिवानाथे वृषराशि थिते गुरौ ।
प्रयागे कुम्भयोगो वै माघ मासे विधुक्षये ॥१॥
माघे वृषगते जीवे मकरे चन्द्र भास्करौ ।
अमावस्यां तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थ नायको ॥२॥

अर्थ—जिस समय वृष राशि पर बृहस्पति जावें और मकर राशि पर चन्द्रमा तथा सूर्य्य हों उस समय अमावस्या के दिन माघ महीने में प्रयागराज में कुम्भपर्व होता है ।१।२।

उज्जैन में कुम्भपर्वयोगः ।

सिंहे गुरु रविर्मेषे कुहां दामोदरे तिथौ ।
उज्जयिन्यां तदा कुम्भो जायते लोक मुक्तिदः ।

अर्थ—जिस समय सिंह राशि में बृहस्पति हों और मेष राशि के सूर्य हों तो द्वादशी तथा अमावस्या इन तिथियों में उज्जैन में कुम्भनाम पर्व होता है वह मुक्ति देनेवाला होता है १।

नोट—स्थानाभाव से गोदावरी कुम्भ का वर्णन शेष रह गया ।

❀ श्रीमते रामानुजायनमः ❀

❀ लोकस्मृति । ❀

रामानुजमहं वंदे सहस्रास्यं जगद्गुरुम् ।
तद्भक्तिर्यन्त्रित: कुर्वे स्वसिद्धान्तविनिश्चयम् ॥ १ ॥

नायं जनो मे सुखदु:खहेतुर्न देवताऽऽत्माग्रहकर्मकाला: ।
मन: परं कारणमामनन्ति संसारचक्रं परिवर्त्तयेद्यत् ॥२

इति भागवतस्कंध ११ अध्याय ।

अर्थ—"दुष्टलोगों से पीड़ितहोनेपर एक ब्राह्मण धैर्यपूर्वक स्थिर रह-कर इस गाथा को गायाकरता था "ये स्वजन देवगण आत्मा ग्रह कर्म और-कालादि कोई भी मेरे सुखदु:ख के कारण नहीं हैं। इसका कारण तो एक-मात्र मनको ही बतलाया जाता है जो कि इस संसार चक्र को निरन्तरचला-या करता है। ॥४३॥

मैं जीवात्मा जिस वक्त इस शरीर से पहिले शरीर मे था उसकी मु-झे कोई स्मृति नहीं है। परन्तु इस शरीर की स्मृति जहाँ से मुझे है वहां से स्वचरित्र इस पुस्तक में उल्लेख करता हूँ।

मेरा जन्म विहारप्रदेश, जि० पटना, पो० नँदलालाबाद, मौजा श्रीपति : मे श्री अवधवंशीयक्षत्रिय के घर मे विक्रमीयसंवत १९४७ चैत्र शुक्ल तीया भरणी नक्षत्र मेषराशि मे हुआ। राशि का नामभी "लेखराज"वर्मा — गया। परन्तु चालूनाम "वनराजसिंह" वर्मा के नाम विख्यात था। रे *पिता का नाम श्री१०८श्री"श्रीरामशरणसिंहवर्मा" था और पिता

तीनभाई थे, श्रीमिनराजसिंहवर्मा, श्रीबहादुरसिंहवर्मा श्रीरामशरणसिं-हे।

मह का नाम श्रीकाशिनाथवर्म्मा था माता का नाम "फक्कीथादेवी" था, मातामही कानाम श्रीरुक्मिणी देवी था मातामह का नाम श्रीस्नेहीसिंहवर्म्मा था बड़े भाईका नाम श्रीसूवासिंहवर्मा था छोटेभाईकानाम श्रीनन्दलालसिंह वर्म्मा था मैं १४ वर्षकीउमरतक तो कुछ हिन्दी पढता और खेलतारहा, किन्तु बीच२मे मेरा मन वैराग्यकीतरफ विजली सा कौंधकर फिरशान्तहोजाता था। श्रीसंवत १९६१ मे मेरीशादीकरने को लोग तैयारहुऐ और फलदानादि भी पहुँचगया, सुनतेही मेरे चित्त ने वैराग्यवाट पर नजर फेकी परन्तु मन के विचारने चित्तको वाटपकड़ने मे वाधा पहुँचाई। झूठीवात झूठीही है। सच्चीवात सच्ची ही है। जब मनुष्यको रस्सीमें सर्पकाभ्रम मिट जाता है तबफिर रस्सीतो है ही। चटपट घंटेमे जिसप्रकार सुयोग्यवैद्य के दवा देने पर रोगी का रोग हटता जाता है संसार से मन हटता जाता था और २८ घंटे मे अपने ज्ञाति के लोगों का साथ छोड़ बाहिर निकल खड़ाहुवा। अपने सुखार्थ मनुष्य को ऐसा ही करना चाहिये क्योंकि यहसंसार केला के खम्भ के समान साररहित है। यह मनुष्य जीवन जल मे उठे हुऐ बुलबुले के समान है यह सब आँख ही से देख रहे हैं। और शास्त्र भी यही कहता है। जैसे—

मनुष्ये कदलीस्तम्भनिःसारे सारमार्गणम्।
करोति यः स सम्मूढो जले बुद्बुदसन्निभे ॥८॥

इति याज्ञवल्क्यस्मृति धर्मशास्त्र अध्याय ३
और गर्गसंहिता विश्वजीवखण्ड अध्याय १

अखिलभुवनजन्मस्थेमभङ्गादिलीले।
विनतविविधभूतव्रातरक्षैकदीक्षे॥

श्रुतिशिरसि विदिप्ते ब्रह्मणि श्रीनिवासे ।
भवतु मम परस्मिञ्शेमुषी भक्तिरूपा ॥
इति शरीरकमीमाँसा रामानुजभाष्य मङ्गलाचरण ॥

जब मैं घर से बाहिर निकल पड़ा और मैं गन में खड़ा हुआ तो
र यह सोचने लगा कि किधरको जाऊँ, यह भी मन में डर लगता था
कोई मनुष्यमुझे आकर पकड न ले । उस वक्त मेरे पास सात रुपया थ
ार में यही आया कि सीतामढ़ी चलना चाहिये । पटना से दीघाघाट
ा गंगा पार होकर रेल से सीतामढ़ी पहुँचा और वहाँ से फिर पैदल च
। सीतामढ़ीसे १४ कोस पर एक नागा बाबा जटाधारी मिले उन के प
: मास तक ठहर गया ।

बाबाजी के पास मुझे यह चिन्ता सदैव रहती थी कि मेरे घर के
मनुष्य मुझे ढूढते २ न आये और पकड़ ले तो सब मेंहनत मेरी निरर्थक
। जो कुछ बाबाजी शिक्षा देते वह मैं सुनता रहता था, बाद फिर क
ाधुओं के साथ नैपाल चला गया और नैपाल से मुक्तिनारायण चला
। वहां कुछदिन रह कर मैं दामोदर कुण्ड चला गया, वहाँ से तुरंत
कर तानसेन पहाड़ से नीचे उतर बुटवल होते गंगासागर चलागया ।
ागर से जगन्नाथपुरी गया वहां पर एक पण्डित आर्तत्राण श्री श्री रा-
र्म्मा जी की कि शिक्षासे व्याकरण की नीव डालदी "वह पण्डित वहाँ
थे" सीतामढी से यहाँ तक मैं ३ वर्षमें पहुचा । अमरकोष और सिद्धा-
ी व्याकरण थोड़ा सा समझा जगदीश में ६ मास बिता कर श्री
'दासजीमहाराज के जमात के साथ प्रयाग के चढ़ाव का चला गया ।
एक मास बिताकर चित्रकूट चला गया । वहाँ से इक्ष्वाकु पालित
पना जनपद देश' श्रीअयोध्याजी को चला गया । वहांपर श्रीतत्र

स्वी जी की छावनी में निवासकरनेलगा, सर्वतिन्त्र स्वतन्त्र व्याकरणाचार्य्य पंडित श्री सरयूदासजी से व्याकरण पढ़ कर न्यायादि अनेक ग्रन्थ पढे। वहाँ कुछ काल बीतने पर विक्रमीय संवत् १९७२ में श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्रीमद्वेदमार्ग प्रतिष्ठापनाचार्य्योभयवेदान्तप्रवर्त्तकाचार्य्य श्रीरामानुज संप्रदाय के प्रधानाचार्य्य श्री १००८ श्री तोताद्रि रामानुज स्वामीजी महाराज श्रीअयोध्याजी में पधारे और माघमास से श्रीरामनवमीतक वहां पर रहे। आप नित्य श्रीकनकभवन में अनेक प्रकार के धर्मोपदेश करते थे वह समय मंगलमय बीतता था। श्रीस्वामी जी के रोज २ दर्शन करते २ मेरा चित्त शुद्ध हो गया और मन में यही आया कि अब शरणागति का ऐसा मौका न मिलेगा पंचसंस्कारयुक्त मन्त्र ले लेना चाहिये और ऐसा ही किया।

मुमुक्षु जनो को भगवत् शरणागति पंचसंस्कारयुक्त मंत्र लेना चाहिये,

अङ्कनं चोर्द्ध्वपुण्ड्रञ्च मन्त्रो नामविधारणम्।
पञ्चमो याग इत्युक्ताः संस्काराः पूर्वसूरिभिः १२।

इति—पद्मपुराण पाताल खंड अध्याय ८२।

याने प्रथम ताप "भुजों में तप्त शंख चक्र की छाप" संस्कार द्वितीय पुण्ड्र "उर्ध्वपुण्ड्रतिलक" संस्कार। तृतीय भागवत् संबन्धी नाम संस्कार चतुर्थ मंत्र संस्कार पञ्चम भगवत् भागवताचार्य्य सेवा उपदेश संस्कार।

श्रीस्वामीजी महाराज, श्रीरामनवमी करके दक्षिण देश चले गये और पं० श्रीसरयूदासजी महाराज चित्रकूट चले गये। तब शृङ्गारभवन के पं० स्वामी श्रीरामकिशोरदाससे मनोरामादि कई एक ग्रन्थ पढे। और अबतक वे वस्त्रादि की सहायता भी करते थे। मैनेविचारा कि कुछ जोतिषशास्त्र

भी पढ़ लेना चाहिये, अयोध्याजी में मत्तगयंद के पास ही पंडित श्रीबालगोविन्द द्विवेदी जी से ज्योतिष के कईएक ग्रन्थ पढा उस समय विक्रमीय संवत् १६७७ में श्रीरामानंदीय वैष्णवों में गुरु परंपरा पर बहुत कोलाहल हुआ। कुछ व्यक्ति "टूटेफूटे अङ्गभंग" ने श्रीरामानुज स्वामी का संबंध छोड अपनी अशास्त्रीय गुरुपरम्परा बनालिया, और अपनी च्युति पर कुछ ध्यान नही दिया।

इन के कर्तव्यों को देख मेरा मन उदास होगया और अयोध्या से उज्जैन चलागया। कुछ दिन बाद वहाँ से लौट अयोध्या होते प्रयाग की यात्रा की। जब मैं प्रयाग से उठा तो गया होते जगन्नाथपुरी को चलागया, वहाँ से श्रीकूर्मसिम्हाचल नरसिंह और पन्नानरसिंह होते श्री वेंकटेशजी गया वहाँ से श्रीरामानुज स्वामीजी के जन्मस्थान भूतपुरी गया वहां से गोविन्दराज भगवान् का दर्शन करते श्रीकुम्भ और इक्ष्वाकु पूजित श्रीरंग जी गया और वहाँपर एकमास ठहर गया। फिर सेतुबन्ध होते हुए श्रीतोताद्रि गया, श्रीस्वामीजी का कैङ्कर्य कर के किष्किंधा पंपासर गया।

फिर वहाँ से सोलापुर, बंबई और डाकोर होते हुए द्वारिकापुरी गया। फिर वहाँ से वींद सरोवर होते मथुरा बृन्दावन और हरिद्वार होते श्रीबद्रीनारायण चलागया, पुन: वहाँ से श्रीअयोध्याजी आया। अयोध्याजी में विचार किया कि जहाँ किसी प्रकार विवाद न हो वहाँ पर रहना चाहिये यह विचार करते ही रहे कि एक दिन वेदान्त पाठशाला के पंडित श्रीरामानुजदास जी ने कहा कि ज्ञानबृद्ध, बयोबृद्ध उत्तरतोताद्रिमठ श्रीबेंकटेशजी का मन्दिर विभीषण कुण्ड में श्री १००८ श्रीश्री बलभद्रस्वामीजी महाराज है, उन के यहाँ किसी प्रकार विवाद न होगा। यह कह कर वह मुझे साथ मे लेकर श्रीस्वामीजी के पास आये और उन से मेरे रहने को प्रार्थ

ना की ।

यह विक्रमीय संवत् १६८० की बात है, तब श्रीस्वामी जी महाराज ने आदरपूर्वक मुझे एक कोठरी स्वतन्त्र रहने को दे दी और मैं उस कोठरी में रहने लगा।

श्रीस्वामीजीमहाराज अपने स्थान में विशेषविद्यार्थियों को रखते अत एव विद्यार्थियों की फिकर सेआप स्थान में बहुत कम रहते थे। परमार्थी पुरुष शारीरिक सुख के ऊपर ध्यान नहीं देते श्री स्वामीजी महाराज ऐसे योगी सत्पुरुष तपस्वी अब होना असम्भव सा प्रतीत होता है ।

उक्त श्री स्वामीजी महाराज के स्थान में बिलासपुरनिवासी पं० श्री नरसिंहाचार्यजी अधिकारी बन के रहते थे । औरकामकाजको बड़ीसावधानी से करते थे विद्यार्थी भी स्थान मे सुयोग्य रहते थे पं०रामदुलारेजी शास्त्री पं० सुदर्शनाचार्यजी पं माधवाचार्यजी पं० अच्युतप्रपन्नाचार्यजी पंडित मुरलीधरशास्त्री पंडितलक्ष्मणाचार्यजी इत्यादि बहुतविद्यार्थीरहते थे सबका नाम लिखाजाये तो एक पुस्तक हो जायगा ।

मेरे मन मे यह उत्साह था कि मैं श्रीअवधवंशीयक्षत्रियों का कुछ चरित्र एवं होनहार प्रणाली लिखूं । इस विषय को मैने विक्रमीय संवत् १६८२ में शुरू कर दिया और विक्रमीय संवत् १६८६ में खतम हो गया पुस्तक तैयार होनेपर मैने निम्न महाशयों को गोचर किया श्रीरामदुलारीशरण रामायणीजी श्रीबाबूरामपालसिंहजी, पं० धर्मनाथपांडेजी महन्थ श्री हनूमानशरणजी, पं० श्रीमनुक्मारीशरणजी और पुजारी श्रीविदेहनन्दिनीशरणजी बाद में पी० एन० चतुर्वेदी भारतवासी प्रेस इलाहाबाद मे छपा दी गई । जो कि श्रीबाबूरामपालसिंहजी मु० राजापुर, पो० नयागाँव

जि० सारण छपरा में मिलती है। पुस्तक का नाम "श्रीअग्रधवंशीय-क्षत्रिय मार्तण्ड" है।

जब पुस्तकछपचुकी तो ५ प्रति नेपाली पं० श्रीअनंताचारीजी के द्वारा श्रीतोताद्रिमठ में भेज दी। जब [illegible] की पूजा में पहुँचगई तो आपकी दया भरीदृष्टि ने उन पुस्तकों को अपना लिया और और मुझे कृतार्थ किया। अयोध्या संस्कृतपत्र के संपादक श्री कालीप्रसाद-शास्त्रीजी ने इस ग्रन्थ की समालोचनाभी कर दी।

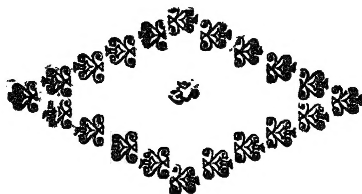
मैंने शारीरक मीमांसा भाष्यादि विशिष्टाद्वैत के ग्रन्थ शास्त्री विद्यारत्न तर्कभूषण श्री १०८ श्रीरामप्रपन्नाचार्यजी महाराज श्रीविजय-राघवजी के मंदिर विभीषणकुंड अयोध्या से अध्यन किया प्रारब्धवश मेरा शरीर प्रवलव्याधि से ग्रसित होगया एक मास तक अस्पताल में भी रहना पड़ा और वहाँ पर कान्यकुब्ज ब्राह्मण पं० राजारामशर्माजी ने मेरा पालन पोषण किया जिस प्रकार माता अपने बच्चे को करती है। और उस समय में जिला गोरखपुर भेड़िया ग्राम निवासी शास्त्री पं० श्रीरमाकांत शर्माजी ने मेरा बहुत उपकार किया जो कि उसके बदले में कुछ भी नहीं दे सतका और इस शरीर से मुझे ऋणी ही बनना पड़ेगा।

विक्रमीय संवत १९९० में श्री १००८श्रीवलभद्रस्वामीजी महाराज का परमपद होगया। अबउनके उत्तर तोताद्रिमठ श्री वेंकटेशजी का मंदिर विभीषणकुंड अयोध्या में सर्वतंत्रस्वतन्त्र पं० सार्वभौमस्वामी श्री१०८श्री रामप्रपन्नाचार्यजी गद्दीपर विराजमान थे। उस समय भी सुयोग्यविद्यार्थी रहते थे, अर्चक पं० [illegible] गोरखपुर के रहते थे अधिकारी पं० श्रीरामरङ्गाचार्यजी रहते थे कामबहुतसुन्दरहोता था उक्त स्वामीजीके

परमपद हो जानेपर वेदान्ती श्री स्वामीश्री१०८श्रीसुदर्शनाचार्यजी गद्दी पर विराजमान हैं, अर्चक पं० रामकुमारशर्मा पाण्डेयजी हैं। अधिकारी श्री स्वामीरामानुजाचार्यजी हैं कामसुन्दरता से चलाते हैं समयानुसार विद्यार्थी भी रहते हैं। वर्णव्यवस्थादिग्दर्शन, और श्रीसम्प्रदायमीमांसा पुस्तक मे पर्वतीय पं० व्याकरणाचार्य श्रीखेमानन्दशर्माजी और पं० श्री देवनायकशर्माशास्त्रीजी ने उक्त दोनो पुस्तक मे वहुत सहायता की है। इन्हें कोटिशः धन्यवाद है, परमात्मा सदा मङ्गलमय इनका समय वितावें।

नागौद मण्डलान्तर्गत महकोना ग्राम निवासी पं० श्रीरामस्नेहित्रिपाठ्यङ्गज श्रीराजारामाचार्य शास्त्रीजोने उक्त पुस्तकोंमे वहुत सहायता की है परमात्मा सदा उनका मङ्गलमयसमय व्यतीत करे।

—श्रीस्वाम्युपनामक धरणीधराचार्य।



शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१६	श्रति	श्रुति
९	६	ससर्ग	संसर्ग
१२	१८	वश्यां	वहुश्यां
१३	८	राव	राम
१५	१२	चय	जय
२०	१०	नधमे	नऽधर्मे
२९	७	कतब्य	कर्तब्य
२९	८	पितकर	विरक्त
३०	७	शमुख	प्रमुख
३४	७	भाजन	भोजन
३१	५	कर्म	कुर्म
४०	२	कंज	कुञ्ज
७६	१८	पुनि	मुनि
भू० १५	७	अद्रि	अद्रि

पुस्तक मिलने का पता:—

(१) बाबू कुल्लरसिंहजी डाक्टर,
मु० लालपुरगौरिमेरन, पो० कल्लुआरी,
जि० दरभंगा (बिहार)

(२) कनकभवन उत्तरद्वार लक्ष्मीनिवासवानाद्रिमठ,
पिपर के नीचे श्रीस्वामि रामानुजाचार्य्य,
मु० रामकोट, अयोध्या,
जि० फैजाबाद (यू. पी.)